श्रीमते रामानुजाय नमः
श्रीलक्ष्मीहयवदनपरब्रह्मणे नमः

3.4

# ऋजुसिद्धान्तकौमुदी

## अर्थ-सहिता

ऋजुकर्ता

## गोविन्दाचार्यः

(गोविन्द प्रसाद शर्मा)

ऋजुसिद्धान्तकौमुदी
प्रथमावृत्तिः- रामानुज जयन्ती २०६२, १००० प्रतयः
ऋजुकर्ता- गोविन्दाचार्यः ( गोविन्द प्रसाद शर्मा )



प्रकाशकः- यतिराजप्रकाशनम्, दिल्ली
दूरभाषः- ०११-२३९३०७७६

प्राप्तिस्थानानि

१. श्री मुक्तिनाथ पीठ वेद विद्याश्रम
6, मारवाड़ी घाट, कुदसिया घाट, बेला रोड़, दिल्ली-५४
दूरभाषः- ०११-२३९३०७७६, ०९८१०४२९४८७

२. अखण्डज्योति बाबा आश्रमः
गल्फूटार, काठमाण्डू, दूरभाषः- ००९७७-१-४३७५०७४

३. श्री मुक्तिनाथ वेद विद्याश्रम ( संस्कृत गुरुकुल )
६७, इण्डस्ट्रियंल एरिया, फेस-1, चण्डीगढ़

४. श्री महासरस्वती विद्याश्रम
७१, इण्डस्ट्रियल एरिया, फेस-1, पंचकूला, हरियाणा

५. श्री रामसहाय वेद वेदाङ्ग विद्याश्रम
१७५२, हुडा, भिवानी, हरियाणा

६. श्रीनिवास संस्कृत पाठशाला
२८४१, पम्पापति रोड़, जयनगर, मैसूर, कर्नाटक

७. जनकल्याण वेद पाठशाला
पनवेल, मुम्बई, महाराष्ट्र

मूल्यम्- ८०/-

# ऋजुसिद्धान्तकौमुदी-विषय-सूची

# प्राक्कथन

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष रूप चतुर्विध पुरुषार्थों की साधना वेद एवं वेद में निर्दिष्ट मार्ग से ही सम्भव है। अतः वेदों का ज्ञान नितान्त आवश्यक है। वेद के छः अंगों में व्याकरण का प्रमुख स्थान है। विभिन्न विद्वानों एवं मनीषियों के चिन्तन का इस भारतभूमि में पुष्पित और पल्लवित होने के क्रम में पाणिनीय व्याकरण का शीर्षस्थान है। प्राचीन एवं नव्य के रूप से दो धाराओं में विभक्त इस व्याकरण की प्राचीन धारा में सूत्रानुसारी व्याख्यात्मक ग्रन्थ जयादित्य-वामनकृत काशिकावृत्ति आदि लिए जाते हैं तो नव्यधारा में प्रक्रियाग्रन्थ भट्टोजिदीक्षितकृत वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी एवं इसी के व्याख्यात्मकग्रन्थ प्रौढमनोरमा एवं नागेशकृत लघुशब्देन्दुशेखर आदि आते हैं। भट्टोजिदीक्षित के शिष्य वरदराजाचार्य ने लघुसिद्धान्तकौमुदी बनाकर प्रक्रिया को थोड़ा सरल बनाया।

आज के समय के अनुकूल सरणी अपनाकर पठन-पाठन का क्रम बनाया जाय, ऐसा चिन्तन बहुत वर्षों से चल रहा था। अपनी दस वर्ष की अवस्था से व्याकरण का अध्ययन प्रारम्भ करके बीस वर्ष की अवस्था में व्याकरण का अध्यापन कार्य प्रारम्भ हुआ। तब से लेकर आज तक लगभग बीस बर्ष तक प्रक्रिया-ग्रन्थ, व्याख्या-ग्रन्थ एवं दार्शनिक-ग्रन्थों का अनवरत अध्यापन चल रहा है। मेरे द्वारा विशेष कर के लघुसिद्धान्तकौमुदी और वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का अध्यापन हुआ। मैं जब सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालय, वाराणसी से सम्बद्ध श्रीनिवासबोधायनरामानुजसंस्कृतमहाविद्यालय, अयोध्या में व्याकरणविभागाध्यक्ष पद पर नियुक्त हुआ, तब से शास्त्री एवं आचार्य कक्षा के ग्रन्थों को पढ़ाने की बाध्यता के कारण प्रक्रियाग्रन्थ के अध्यापन में कमी आने लगी तो मैंने महाविद्यालय के समय के अतिरिक्त प्रातः १० बजे तक और शाम ४ बजे के बाद इन प्रक्रिया ग्रन्थों को पढ़ाया।

इस प्रकार से पठन-पाठन तो चलता रहा किन्तु वहाँ पर एक कठिनाई यह आई कि महाविद्यालय में पढ़ने के लिये आने वाले छात्र ज्यादा तर आठवीं पास होते थे और उन्हें पूर्वमध्यमा की परीक्षा देने की जल्दी होती थी। पूर्वमध्यमा-प्रथमवर्ष के व्याकरण-विषय में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी निर्धारित है। अतः लघुसिद्धान्तकौमुदी की पढ़ाई उनकी नहीं हो पाती थी। जो छात्र मेरी सलाह मानते थे, उन्हें तो हम लघुसिद्धान्तकौमुदी ही पढ़ाकर बाद में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के कुछ विशेष प्रयोगों की तैयारी करा देते थे और शास्त्री पास करते-करते छात्र प्रक्रियाग्रन्थ को किसी तरह समझ पाते। इस तरह परीक्षा में निर्धारित पाठ्यक्रम और परम्परागत पाठ्यक्रम का सामंजस्य बैठाकर किसी तरह काम चलाया गया।

मेरी यह इच्छा होती थी कि पूर्वमध्यमा की परीक्षा देने के पहले छात्र लघुसिद्धान्तकौमुदी पूर्णरूपेण कण्ठस्थ कर लें जिससे आगे परीक्षा में निर्धारित पाठ्यक्रम भी ठीक तरह से चलता रहे, किन्तु परीक्षा में बैठने की शीघ्रता के कारण यह मेरी इच्छा को बहुत ही कम छात्र पूर्ण कर पाते।

जब से सरकारी नौकरी छोड़कर दिल्ली में वि० सं २०५६ में श्रीमुक्तिनाथ पीठ वेद विद्याश्रम की स्थापना के बाद गुरुकुलीय परम्परा के अनुसार पठन-पाठन शुरु किया और चण्डीगढ, पञ्चकूला-हरियाणा, जयपुर, भिवानी-हरियाणा आदि अनेक स्थानों पर गुरुकुल स्थापित किये गये तथा उन स्थानों पर यह निर्णय लिया गया कि जो साक्षर हैं, ऐसे ८ से १२ वर्ष के छात्र गुरुकुल में लिये जायें। तब से छोटे बालकों को भी पढ़ाने का सिलसिला प्रारम्भ हुआ किन्तु यहाँ भी एक नया अनुभव यह हुआ कि छोटे-छोटे बालक लघुसिद्धान्तकौमुदी के कठिन प्रयोगों को पकड़ने में कठिनाई का अनुभव कर रहे हैं। इससे मेरे मन में यह इच्छा हुई कि इससे भी छोटे किन्तु सारगर्भित एक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना हो, जिसमें बहुप्रचलित सन्धि, धातु, शब्द, कृदन्त एवं तद्धितान्त प्रयोगों का समावेश किया जाय जिससे सुकुमार एवं किशोर अवस्था के बालक आसानी से पकड़ सकें। इसी चिन्तन में ठीक छ सौ सूत्रों से मूल ऋजुसिद्धान्तकौमुदी की रचना की और इसको कम्प्यूटर में टाईप कराकर फोटोप्रति कराकर के छात्रों को पढ़ाना शुरु किया। इससे लघु छात्रों और अत्यन्त सुकुमारमति वाले छात्रों को पढ़ने में सरलता हुई, छात्रों की रुचि बढ़ी। कालान्तर में केवल मूलमात्र ऋजुसिद्धान्तकौमुदी प्रकाशित हुई। अध्यापन कराते समय उसमें बहुत सी न्यूनताएँ लगीं, उनका संशोधन क्रिया और उसमें से कुछ सूत्रों को हटाया तो कुछ और नये सूत्र जोड़े।

यह कौमुदी किसी अन्य ग्रन्थ की तुलना में नहीं लिखी गई है अपितु लघुसिद्धान्तकौमुदी एवं वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी को लगाने में सहायता हो, उनमें बालकों एवं जिज्ञासुओं की सहज

प्रवृत्ति हो, इसलिए प्रवेशिका ग्रन्थ के रूप में इसे लेना चाहिए। पूर्ण शब्दज्ञान तो वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से ही सम्भव है। अतः पूर्ण वैयाकरण बनने के लिए इच्छुक को चाहिए कि पहले ऋजुसिद्धान्तकौमुदी का अध्ययन करे, उसके बाद लघुसिद्धान्तकौमुदी का और उसके बाद वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का अध्ययन करे। ऋजु से लघु पूर्ण होते-होते अष्टाध्यायी के सूत्र एवं उनमें अनुवृत्ति क्रम का भी अभ्यास करे तो सोने पे सोहागा हो जायेगा।

इसकी श्रीधरमुखोल्लासिनी नाम से विस्तृत हिन्दी टीका(लगभग ७०० पृष्ठ) भी लिख कर तैयार है, प्रकाशकों की प्रतीक्षा है।

## कृतज्ञता-ज्ञापन

जिन्होंने मुझे दस वर्ष की अवस्था में मेरे घर से उठा कर अपनी ही गोद में रखकर पालन-पोषण करते हुए व्याकरण के सूत्रों को रटाया एवं जिनके कृपालेश एवं अत्यन्त स्नेह से व्याकरण की षष्ठी-प्रथमा का मैं यत्किंचित ज्ञानलेश प्राप्त कर सका, ऐसे अपने घर पर अपने ही पुत्र की तरह रखकर शिक्षा एवं दीक्षा प्रदान करने वाले अनन्त श्रीविभूषित वैकुण्ठवासी मेरे पूज्य गुरुवर स्वामी श्री श्रीनिवास मुक्तिनारायण रामानुज जीयर श्रीधराचार्य स्वामी जी महाराज (व्याकरण-साहित्य-शांकरवेदान्त-रामानुजवेदान्त-धर्मशास्त्र-इतिहास इन छः विषयों के आचार्य) जी से मैं कभी उऋण नहीं हो सकूँगा। आपके इस धराधाम पर रहते हुए आपके मुखोल्लासार्थ कोई ऐसा कार्य नहीं कर सका। यदि इस ग्रन्थ से आपका थोड़ा सा भी मुखोल्लास हुआ तो मैं अपने को धन्य समझूँगा। वर्तमान में आपकी ही पीठ पर विराजमान मुक्तिनाथ पीठाधीश्वर स्वामी श्री कमलनयनाचार्य जी के मंगलाशासन की भी सतत कामना करता हूँ।

ग्रन्थ की रचना में अपना अमूल्य समय देकर ग्रन्थ को सही दिशा प्रदान करने वाले मेरे पूज्य गुरुवर डॉ. श्री रामप्रसाद मिश्र जी, प्राचार्य- संस्कृत महाविद्यालय, उत्तर तोताद्रिमठ, अयोध्या तथा मेरे मित्रद्वय आचार्य श्री रघुनाथ नेपाल जी एवं श्री केशवशरण अर्याल जी के सुझावों एवं सहयोगों से इसकी महत्ता और बढ़ गई है, अतः मैं कैसे आप लोगों के प्रति आभार व्यक्त करूँ? बस, मैं अपने को आपसे बहुत ही उपकृत मानता हूँ।

प्रूफ संशोधन में अमूल्य सहयोग प्रदान करने वाले अपने सहयोगी श्री सुदर्शनाचार्य जी, श्री कृष्णप्रपन्नाचार्य जी, आचार्य विष्णु प्रसाद शर्मा, श्री धनराज कुमार पाण्डेय जी का मैं ऋणी हूँ।

टाईप सेटिंग, प्रूफ संशोधन और बीच-बीच में हुई त्रुटियों पर ध्यान आकर्षित कर जो सहयोग प्रदान किया ऐसी अपनी सुपुत्री और शिष्या कु. लक्ष्मी शर्मा का सहयोग भी सराहनीय रहा। इसी तरह कम्प्यूटर यन्त्र से सम्बन्धित हर कार्य के लिए सतत तैयार रहने वाले अपने शिष्य श्याम प्रसाद शर्मा, घनश्याम रेग्मी, पुरुषोत्तम आचार्य, वामन सापकोटा एवं बलराम सापकोटा की आज्ञाकारिता भी अति स्तुत्य है। अतः इन सबों को आशीर्वाद प्रदान किये विना भी नहीं रह सकता।

विद्वानों की प्रवृत्ति तो प्रायः महाभाष्य एवं शेखर, मनोरमा, प्रदीप, उद्योत, भूति आदि टीकाओं एवं परिष्कार की तरफ होती है, अतः ऋजुसिद्धान्तकौमुदी जैसी अत्यल्पकाय एवं अत्यल्प ज्ञानप्रदायक इस ग्रन्थ के आकार-प्रकार को देखकर उन्हें प्रसन्नता शायद ही हो फिर भी सरलीकरण करके आम छात्रों को व्याकरण में रुचि जगाने का एक प्रयत्न समझ कर विद्वज्जन मुझे मेरी धृष्टता पर क्षमादान देंगे, ऐसी आशा करता हूँ साथ ही इससे भी और सरलीकरण एवं बोधगम्यता के लिए और क्या करना उचित होगा? यह भी यदि विद्वज्जनों से अंगुल्या निर्देश हो जाय तो यह दास कृतार्थ हो जायेगा और आगे तदनुरूप कदम बढ़ायेगा।

अन्त में इस सरलीकरण के लक्ष्य में मैं कितना सफल हूँ, यह विद्वान् लोग ही मूल्यांकन करेंगे। यदि इसमें कुछ ग्राह्य हो तो आशीर्वादों से सिंचित करेंगे और त्रुटियों में क्षमादान-पूर्वक हमें सूचित कर एक बार भूलसुधार का अवसर प्रदान करेंगे, ऐसी पूर्ण आशा है।

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः। हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः॥

विदुषां वशंवदः

रामानुज जयन्ती २०६२ गोविन्दाचार्य ( गोविन्द प्रसाद शर्मा )

12 मई 2005 दिल्ली

श्रीश्रीनिवासमुक्तिनारायणरामानुजयतिभ्यो नमः।।

# ऋजुसिद्धान्तकौमुदी

हरिं मुनित्रयं नत्त्वा मुक्तिनारायणं यतिम्।
करोमि बालबोधार्थमृजुसिद्धान्तकौमुदीम्।।

## संज्ञाप्रकरणम्

माहेश्वरसूत्राणि-

१.अइउण्। २.ऋलृक्। ३.एओङ्। ४.ऐऔच्। ५.हयवरट्। ६.लण्। ७.ञमङणनम्। ८.झभञ्। ९.घढधष्। १०.जबगडदश्। ११. खफछठथचटतव्। १२.कपय्। १३.शषसर्। १४.हल्।

एतेषां चतुर्दशानां माहेश्वरसूत्राणां प्रयोजनं प्रत्याहारसिद्धिः। एषामन्त्या हल इत्संज्ञकाः। हकारादिषु पठित अकार उच्चारणार्थः।

.......................................................................................................

**अर्थः-**

मैं गोविन्द प्रसाद शर्मा (गोविन्दाचार्य) श्रीहरि भगवान, पाणिनि-कात्यायन एवं पतञ्जलि इन तीन मुनियों तथा स्वामी श्री श्रीनिवास मुक्तिनारायण रामानुज जीयर यति जी को प्रणाम करके बालकों को व्याकरणशास्त्र का सरलता से ज्ञान हो, इसलिए ऋजुसिद्धान्त-कौमुदी नामक ग्रन्थ की रचना करता हूँ।

माहेश्वर इन चौदह सूत्रों का प्रयोजन अण्, अच् आदि प्रत्याहार की सिद्धि है। इन सूत्रों के अन्तिम वर्णों की इत्संज्ञा होती है। हयवरट् इत्यादि में हकार, यकार, वकार ऐसे वर्णों के साथ पठित अकार केवल उच्चारण करने में सुविधा हो, इसलिए लगाया गया है।

इत्संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१. हलन्त्यम् १।३।३।।**

उपदेशेऽन्त्यं हल् इत्संज्ञकं भवति।

मुनित्रयस्य प्रथममुच्चारणमुपदेशः कथ्यते।

लोपसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२. अदर्शनं लोपः १।१।६०।।**

विद्यमानस्य अदर्शनं लोपः कथ्यते।

लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३. तस्य लोपः १।३।९।।**

तस्येतो लोपो भवति।

प्रत्याहारसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४. आदिरन्त्येन सहेता १।१।७१।।**

अन्त्येनेता सहित आदिर्मध्यगानां स्वस्य च बोधको भवति।

अनेन सूत्रेण कृता संज्ञा प्रत्याहारः कथ्यते।

ह्रस्व-दीर्घ-प्लुत-संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**५. ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः १।२।२७।।**

एकमात्रिक-द्विमात्रिक-त्रिमात्रिकोकारोच्चारणकाल इवोच्चारण-कालवत अचः क्रमाद् ह्रस्वदीर्घप्लुतसंज्ञा भवति।।

..............................................................................................................

१- उपदेश अवस्था में अन्त्य हल् वर्णों की इत्संज्ञा होती है।

पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि के प्रथम उच्चारण को उपदेश कहते हैं।

२- विद्यमान के अदर्शन को लोप कहते हैं।

३- उस इत्संक वर्ण का लोप होता है।

४- अन्त्य इत्संज्ञक वर्ण के साथ उच्चारित जो आदि वर्ण, वह मध्य के वर्णों के साथ अपना भी बोधक होता है।

इस सूत्र के द्वारा की गई संज्ञा को प्रत्याहार कहते हैं।

५- एकमात्रिक उकार, द्विमात्रिक ऊकार और त्रिमात्रिक ऊ3कार के उच्चारण काल के समान उच्चारण काल वाले अचों की क्रमशः ह्रस्वसंज्ञा, दीर्घसंज्ञा और प्लुतसंज्ञा होती है।

उदात्तसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**६. उच्चैरुदात्तः १।२।२९॥**

स्थानेषूर्ध्वभागे निष्पन्नोऽजुदात्तसंज्ञको भवति।

अनुदात्तसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**७. नीचैरनुदात्तः १।२।३०॥**

स्थानेष्वधोभागे निष्पन्नोऽजनुदात्तसंज्ञको भवति।

स्वरितसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**८. समाहारः स्वरितः १।२।३१॥**

यत्र उदात्तानुदात्तयोरेकत्र समाहारः स स्वरितसंज्ञको भवति।

अनुनासिकसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**९. मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः १।१।८॥**

मुखेन नासिकया चोच्चार्यमाणो वर्णोऽनुनासिकसंज्ञको भवति।

अच्प्रत्याहारः प्रथमतो ह्रस्वदीर्घप्लुतभेदेन त्रिधा भवति।

पुन उदात्तादिभेदेन त्रिधा भवति।

पुनश्चानुनासिकाननुनासिकभेदेन द्विधा भवति।

---

६- कण्ठ-तालु आदि स्थानों में ऊपरी भाग से उच्चारित अच् की उदात्तसंज्ञा होती है।

७- कण्ठ-तालु आदि स्थानों में निम्न भाग से उच्चारित अच् की अनुदात्तसंज्ञा होती है।

८- जहाँ उदात्त और अनुदात्त दोनों का एकत्र समहार हो, ऐसे अच् की स्वरितसंज्ञा होती है।

९- मुख और नाक से एक साथ उच्चारित होने वाले वर्णों की अनुनासिकसंज्ञा होती है।

इस तरह अच् अर्थात् स्वर वर्ण ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत के भेद से तीन-तीन प्रकार के हुए।

वह तीन प्रकार का अच् उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के भेद से तीन-तीन प्रकार का हुआ।



फिर अनुनासिक और अननुनासिक के भेद से दो दो प्रकार का हुआ।

तेषु लृवर्णो दीर्घाभावाद् द्वादशधा भवति।
एच्प्रत्याहारोऽपि ह्रस्वाभावाद् द्वादशधा भवति।
अन्ये स्वरा अष्टादशधा भवन्ति।
यवला अनुनासिकाननुनासिकभेदेन द्विधा भवन्ति।
विसर्जनीय-जिह्वामूलीयोपध्मानीयभेदेन विसर्गस्त्रिधा भवति।
विसर्जनीयः सामान्यः, कखाभ्यां पूर्वो जिह्वामूलीयः, पफाभ्यां पूर्व उपध्मानीयः।
कादयो मपर्यन्ता वर्णाः स्पर्शसंज्ञकाः।
यण्प्रत्याहारोऽन्तःस्थसंज्ञकः।
शल्प्रत्याहार ऊष्मसंज्ञकः।
अच्प्रत्याहारः स्वरसंज्ञकः।
वर्णोत्पत्तिस्थानं वर्णानां स्थानम्।
वर्णोच्चारणे यत्नः प्रयत्नः।
कु-कवर्गः, चु-चवर्गः, टु-वर्गः, तु-तवर्गः, पु-पवर्गः।

---

अर्थः- उनमें से लृवर्ण के दीर्घ न होने से वह बारह प्रकार का हुआ।
एच् प्रत्याहार भी ह्रस्व के न होने से बारह प्रकार के हुए।
शेष अच् वर्ण अठारह-अठारह प्रकार के हुए।
अनुनासिक और अननुनासिक के भेद से य्, व्, ल् ये अक्षर दो-दो प्रकार के होते हैं।
विसर्जनीय, जिह्वामूलीय और उपध्मानीय के भेद से विसर्ग तीन प्रकार के होते हैं।
सामान्य विसर्ग को विसर्जनीय विसर्ग कहते हैं। क-ख से पहले उच्चारित विसर्ग को जिह्वामूलीय कहते हैं और प-फ से पहले उच्चारित विसर्ग को उपध्मानीय कहते हैं।
क से म तक के वर्णों की 'स्पर्श' संज्ञा होती है।
यण्प्रत्याहार की 'अन्तःस्थ' संज्ञा होती है।
शल्प्रत्याहार के वर्णों की 'ऊष्म' संज्ञा होती है।
अचों की 'स्वर' संज्ञा होती है।
वर्णों के उच्चारण स्थान को 'स्थान' कहते हैं।
वर्णों के उच्चारण में होने वाले यत्न को 'प्रयत्न' कहते हैं।
कु से कवर्ग, चु से चवर्ग, टु से टवर्ग, तु से तवर्ग और पु से पवर्ग समझना चाहिये।

सवर्णसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१०. तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् १।१।९।।**

ताल्वादिस्थानमाभ्यन्तरप्रयत्नश्च येषां वर्णानां परस्परं तुल्यं तेषां मिथः सवर्णसंज्ञा भवति।

**(वार्तिकम्) ऋलृवर्णयोर्मिथः सावर्ण्यं वाच्यम्।**

(ऋलृवर्णौ परस्परं सवर्णौ भवतः, इत्यर्थः।)

**अथ स्थानानि।**

अकार-कवर्ग-हकार-विसर्जनीयानां कण्ठस्थानम्।
इकार-चवर्ग-यकार-शकाराणां तालुस्थानम्।
ऋकार-टवर्ग-रकार-षकाराणां मूर्धस्थानम्।
लृकार-तवर्ग-लकार-सकाराणां दन्तस्थानम्।
उकार-पवर्गोपध्मानीयविसर्गाणामोष्ठस्थानम्।
ञमङणनानां नासिकास्थानं च भवति। एदैतोः कण्ठस्थानम्।
ओदौतोः कण्ठोष्ठस्थानम्। वकारस्य दन्तोष्ठस्थानम्।
जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलस्थानम्। अनुस्वारस्य नासिकास्थानम्।

..............................................................................................

१०- तालु आदि स्थान और आभ्यन्तर प्रयत्न ये जिस वर्ण का जिस वर्ण के साथ तुल्य हों उन वर्णों की आपस में सवर्णसंज्ञा होती है।

वार्तिकार्थः- ऋ औ लृ वर्ण ये आपस में सवर्णसंज्ञक होते हैं।

अकार, कवर्ग, हकार और विसर्जनीय विसर्ग का कण्ठ स्थान है।
इकार, चवर्ग, यकार और शकार का तालु स्थान है।
ऋकार, टवर्ग, रकार और षकार का मूर्धा स्थान है।
लृकार, तवर्ग, लकार और सकार का दन्त स्थान है।
उकार, पवर्ग, उपध्मानीय-विसर्ग का ओष्ठ स्थान है।
ञ्, म्, ङ्, ण्, न् का नासिका स्थान भी होता है।
ए और ऐ का कण्ठ-तालु स्थान है।
ओ और औ का कण्ठ-ओष्ठ स्थान है।
वकार का दन्त-ओष्ठ स्थान है।
जिह्वामूलीय विसर्ग का जिह्वामूल स्थान है।
अनुस्वार का नासिका स्थान है।

## अथ प्रयत्नाः

आभ्यन्तरबाह्यभेदन प्रयत्नो द्विधा भवति।

स्पृष्टेषत्स्पृष्टेषद्विवृत-विवृतभेदेन आभ्यन्तरप्रयत्नश्चतुर्धा भवति।

स्पर्शसंज्ञकवर्णानां स्पृष्टप्रयत्नः।

अन्तःस्थसंज्ञकवर्णानामीषत्स्पृष्टप्रयत्नः।

ऊष्मसंज्ञकवर्णानामीषद्विवृतप्रयत्नः।

स्वरसंज्ञकानां वर्णानां विवृतप्रयत्नः।

विवार-संवार-श्वास-नाद-घोषाघोषाल्पप्राण-महाप्राणोदात्तानुदात्त-स्वरितभेदेन बाह्यप्रयत्न एकादशधा भवति।

अच्प्रत्याहारस्योदात्तानुदात्तस्वरितप्रयत्ना भवन्ति।

खर्प्रत्याहारस्य विवारश्वासाघोषप्रयत्ना भवन्ति।

हश्प्रत्याहारस्य संवारनादघोषप्रयत्ना भवन्ति।

वर्गेषु प्रथमतृतीयपञ्चमवर्णानां यण्प्रत्याहारस्य चाल्पप्राणप्रयत्नो भवति।

वर्गेषु द्वितीयचतुर्थवर्णानां शल्प्रत्याहारस्य च महाप्राणप्रयत्नो भवति।

---

अर्थः- आभ्यन्तर और बाह्यप्रयत्न के भेद से प्रयत्न दो प्रकार के होते हैं।

स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट, ईषद्विवृत और विवृत के भेद से आभ्यन्तर प्रयत्न चार प्रकार का है।

स्पर्शसंज्ञक वर्णों का स्पृष्ट प्रयत्न होता है।

अन्तःस्थसंज्ञक वर्णों का ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न होता है।

ऊष्मसंज्ञक वर्णों का ईषद्विवृत प्रयत्न होता है।

स्वरसंज्ञक वर्णों का विवृत प्रयत्न होता है।

विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के भेद से बाह्य-प्रयत्न ग्यारह प्रकार का होता है।

अच् प्रत्याहार के उदात्त, अनुदात्त और स्वरित-प्रयत्न होते हैं।

खर् प्रत्याहार के विवार, श्वास, अघोष-प्रयत्न होते हैं।

हश् प्रत्याहार के संवार, नाद, घोष-प्रयत्न होते हैं।

वर्गों के प्रथम, तृतीय, पंचम वर्ण एवं यण् प्रत्याहार का अल्पप्राणप्रयत्न है।

वर्गों के द्वितीय, चतुर्थ वर्ण एवं शल् प्रत्याहार का महाप्राण-प्रयत्न है।

संहितासंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ११. परः सन्निकर्षः संहिता १।४।१०९॥

वर्णानामत्यन्तसन्निधिः संहितासंज्ञको भवति।

संयोगसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## १२. हलोऽनन्तराः संयोगः १।१।७॥

अच्प्रत्याहारहीनानां हल्वर्णानां योगे समुदायस्य संयोगसंज्ञा भवति।

पदसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## १३. सुप्तिङन्तं पदम् १।४।१४॥

सुबन्तं तिङन्तं च पदसंज्ञं भवति।

इत्संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## १४. उपदेशेऽजनुनासिक इत् १।३।२॥

उपदेशेऽनुनासिकोऽजित्संज्ञको भवति।

पाणिनीयानुनासिक्यं व्यवहारतोऽपि ज्ञायते।

इति संज्ञाप्रकरणम्।

.................................................................................................................

११- वर्णों के अत्यन्त सन्निधि की संहितासंज्ञा होती है।

१२- अचों से हीन हल् वर्णों के समुदाय की संयोगसंज्ञा होती है।

१३- सुबन्त और तिङन्त की पदसंज्ञा होती है।

१४- उपदेश अवस्था में अनुनासिक अच् की इत्संज्ञा होती है।
पाणिनि जी के अनुनासिक वर्ण उनके व्यवहार से जाने जाते हैं।

इति संज्ञाप्रकरणम्।

# अथ अच्सन्धिप्रकरणम्

यण्सन्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**१५. इको यणचि ६।१।७७**

इकः स्थाने यण् भवति अचि परे संहितायां विषये।

अनियमे नियमकारकं परिभाषासूत्रम्

**१६. स्थानेऽन्तरतमः १।१।५०॥**

प्रसङ्गे सति सदृशतम आदेशो भवति।

स्थानार्थगुणप्रमाणकृतसादृश्यं भवति।

द्वित्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१७. अनचि च ८।४।४७॥**

अचः परस्य यरो विकल्पेन द्वित्वं भवति, अनचि परे।

जश्त्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१८. झलां जश् झशि ८।४।५३॥**

झलां स्थाने जश् भवति झशि परे।

लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**१९. संयोगान्तस्य लोपः ८।२।२३॥**

संयोगान्तपदस्य लोपो भवति।

---

१५- इक् के स्थान पर यण् आदेश होता है अच् परे रहने पर संहिता के विषय में।

१६- प्रसंग रहने पर स्थान, अर्थ, गुण और प्रमाण से तुल्यतम आदेश होता है। स्थान, अर्थ, गुण और प्रमाण से सादृश्य माना जाता है।

१७- अच् से परे यर् को द्वित्व होता है विकल्प से, अच् परे न होने पर।

१८- झलों के स्थान पर जश् आदेश होता है झश् के परे रहने पर।

१९- संयोगान्त पद का लोप होता है।

अनियमं नियमकारकं परिभाषासूत्रम्

## २०. अलोऽन्त्यस्य १।१।५२।।

षष्ठीनिर्दिष्टोऽन्त्यस्याल: स्थाने आदेशो भवति।

(वार्तिकम्) यण: प्रतिषेधो वाच्य:।

सुद्ध्युपास्य:। मद्ध्वरि:। धात्त्रंश:। लाकृति:।

अयादि-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

## २१. एचोऽयवायाव: ६।१।७८।।

एच: स्थाने अय् अव् आय् आव् एते आदेशा भवन्ति, अचि परे।

अनियमं नियमविधायकं परिभाषासूत्रम्

## २२. यथासंख्यमनुदेश: समानाम् १।३।१०।।

समसम्बन्धी विधिर्यथासंख्यं भवति।

हरये। विष्णवे। नायक:। पावक:।

अवावादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## २३. वान्तो यि प्रत्यये ६।१।७९।।

यकारादौ प्रत्यये परे ओदौतो: स्थानेऽव्आव्-आदेशौ भवत:।

गव्यम्। नाव्यम्।

गुणसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## २४. अदेङ् गुण:।१।१।२।।

अत् एङ् च गुणसंज्ञकौ भवत:।

तपरग्रहणे सति सवर्णस्य ग्रहणं न भवति।

---

२०- षष्ठीविभक्ति के द्वारा निर्दिष्ट अन्त्य अल् के स्थान पर आदेश होता है।

वार्तिकार्थ:- यण् का लोप निषेध कहना चाहिये।

२१- एच् के स्थान पर अय्, अव्, आय्, आव् आदेश हों अच् के परे रहने पर।

२२- समान संख्या वाली विधि क्रम से होती है।

२३- यकार वर्ण आदि में हो ऐसे प्रत्यय के परे रहने पर ओ और औ के स्थान पर अव् और आव् ये आदेश होते हैं।

२४- ह्रस्व अकार एवं एङ् प्रत्याहार की गुण संज्ञा होती है। तपरग्रहण होने पर सवर्ण का ग्रहण नहीं होता है।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

**२५. आद्गुणः ।६।१।८७।।**

अवर्णादचि परे पूर्वपरयोः स्थाने गुणसंज्ञक एकादेशो भवति।

उपेन्द्रः। गङ्गोदकम्।

रपरविधायकं विधिसूत्रम्

**२६. उरण् रपरः। १।१।५१।।**

ऋकारस्य ऌकारस्य च स्थाने प्राप्तादेशोऽण् रलपरो भूत्वा प्रवर्तते।

कृष्णर्द्धिः। तवल्कारः।

लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२७. लोपः शाकल्यस्य।८।३।१९।।**

अशि परेऽवर्णपूर्वयोः पदान्तयोयवयोर्वा लोपो भवति।

अधिकारसूत्रं विधिसूत्रञ्च

**२८. पूर्वत्रासिद्धम् ८।२।१।।**

सपादसप्ताध्यायीं प्रति त्रिपाद्यसिद्धा, त्रिपाद्यामपि पूर्वं प्रति परमसिद्धम्।

हर इह, हरयिह। विष्ण इह, विष्णविह।

वृद्धिसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२९. वृद्धिरादैच् १।१।१।**

आद् ऐच्च वृद्धिसंज्ञकौ भवतः।

---

२५- अवर्ण से अच् परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर गुणसंज्ञक एक आदेश होता है।

२६- ऋकार एवं ऌकार के स्थान पर आदेश के रूप में प्राप्त अण्, र् और ल् को साथ लेकर प्रवृत्त होता है।

२७- अश् प्रत्याहार के परे रहने पर, अवर्ण पूर्वक, पदान्त में स्थित य्-व् इन वर्णों का विकल्प से लोप होता है।

२८- सपादसप्ताध्यायी की दृष्टि में त्रिपादी असिद्धा होती है, त्रिपादी में भी पूर्व त्रिपादी के प्रति पर त्रिपादी असिद्धा होती है।

२९- दीर्घ आकार और ऐच् की वृद्धिसंज्ञा होती है।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**३०. वृद्धिरेचि ६। १। ८८॥**

अवर्णादचि परे पूर्वपरयोः स्थाने वृद्धिसंज्ञक एकादेशो भवति।

कृष्णैकत्वम्। गङ्गौघः। देवैश्वर्यम्। कृष्णौत्कण्ठ्ययम्॥

उपसर्गसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**३१. उपसर्गाः क्रियायोगे १।४।५९॥**

प्रादयः क्रियायोगे उपसर्गसंज्ञका भवन्ति।

प्र, परा, अप, सम, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप, एते प्रादयः कथ्यन्ते।

धातुसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**३२. भूवादयो धातवः १। ३। १॥**

भ्वादिगणपठिताः क्रियावाचका धातुसंज्ञका भवन्ति।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**३३. उपसर्गादृति धातौ ६। १। ९१।**

अवर्णान्तादुपसर्गादृकारादौ धातौ परे पूर्वपरयोः स्थाने वृद्धिसंज्ञक एकादेशो भवति। प्रार्च्छति

पररूपविधायकं विधिसूत्रम्

**३४. एङि पररूपम् ६।१।९४॥**

अवर्णान्तादुपसर्गादेङादौ धातौ परे पूर्वपरयोः स्थाने पररूपैकादेशो भवति।

प्रेजते। उपोषति।

................................................................................................

३०- अवर्ण से अच् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक एक आदेश होता है।

३१- प्र, परा, आदि क्रिया के योग में उपसर्गसंज्ञक होते हैं।

३२- भ्वादिगणों में पठित होते हुए जो क्रियावाचक भी है, उनकी धातुसंज्ञा होती है।

३३- अवर्णान्त उपसर्ग से ऋकारादि धातु परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक एक आदेश होता है।

३४- अवर्णान्त उपसर्ग से एङादि धातु के परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर पररूप एकादेश होता है।

सवर्णदीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**३५. अकः सवर्णे दीर्घः ६।१।१०१॥**

अकः सवर्णेऽचि परे पूर्वपरयोः स्थाने दीर्घ एकादेशो भवति।

दैत्यारिः। श्रीशः। विष्णूदयः। होतृकारः।

पूर्वरूपविधायकं विधिसूत्रम्

**३६. एङः पदान्तादति ६।१।१०९॥**

पदान्तादेङोऽति परे पूर्वपरयोः स्थाने पूर्वरूपैकादेशो भवति।

हरेऽव। विष्णोऽव।

इति अच्सन्धिप्रकरणम्

---

३५- अक् से सवर्ण अच् परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर दीर्घसंज्ञक एकादेश होता है।

३६- पदान्त एङ् से ह्रस्व अकार के परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होता है।

इति अच्सन्धिप्रकरणम्।

# अथ हल्सन्धिप्रकरणम्

श्चुत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३७. स्तोः श्चुना श्चुः ८।४।४०॥**

सकारतवर्गयोः स्थाने शकारचवर्गाभ्यां योगे शकारचवर्गौ भवतः।

रामश्शेते। रामश्चिनोति। सच्चित्। शार्ङ्गिञ्जय।

ष्टुत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३८. ष्टुना ष्टुः।८।४।४१॥**

सकारतवर्गयोः स्थाने षकारचवर्गाभ्यां योगे षकारटवर्गौ भवतः।

रामष्षष्ठः। रामष्टीकते। पेष्टा। तट्टीका।

जश्त्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३९. झलां जशोऽन्ते ८।२।३९॥**

पदान्ते झलां जशो भवन्ति। वागीशः।

अनुनासिकादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**४०. यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा ८।४।४५॥**

पदान्तस्य यरोऽनुनासिके परेऽनुनासिक आदेशो वा भवति।

एतन्मुरारिः, एतद् मुरारिः।

चरादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**४१. खरि च ८।४।५५॥**

खरि परे झलां स्थाने चरो भवन्ति। तच्चित्रम्। उत्पथम्।

---

३७- सकार और तवर्ग के स्थान पर शकार और चवर्ग का योग होने पर शकार और चर्वग आदेश होते हैं।

३८- दन्त्य सकार और तवर्ग के स्थान पर मूर्धन्य षकार और टवर्ग का योग होने पर मूर्धन्य षकार और टवर्ग आदेश होते हैं।

३९- पद के अन्त में विद्यमान झलों के स्थान पर जश् आदेश होता है।

४०- अनुनासिक के परे रहने पर पदान्त यर् के स्थान पर अनुनासिक आदेश विकल्प से होता है।

४१- खर् प्रत्याहार के परे रहते झल् के स्थान पर चर् आदेश होते हैं।

अनुस्वारविधायकं विधिसूत्रम्

**४२. मोऽनुस्वारः ८।३।२३॥**

मकारान्तस्य पदस्यानुस्वारो भवति हलि परे। हरिं वन्दे।

अनुस्वारविधायकं विधिसूत्रम्

**४३. नश्चापदान्तस्य झलि ८।३।२४॥**

अपदान्तस्य नस्य मस्य चानुस्वारो भवति झलि परे।

यशांसि। आक्रंस्यते।

परसवर्णविधायकं विधिसूत्रम्

**४४. अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः ८।४।५८॥**

अनुस्वारस्य ययि परे परसवर्णो भवति। शान्तः।

विकल्पेन परसवर्णविधायकं विधिसूत्रम्

**४५. वा पदान्तस्य ८।४।५९॥**

पदान्तस्यानुस्वारस्य ययि परे वा परसवर्णो भवति।

त्वङ्करोषि, त्वं करोषि।

तुगागमविधायकं विधिसूत्रम्

**४६. छे च ६।१।७३॥**

ह्रस्वस्य छकारे परे तुगागमो भवति।

परिभाषासूत्रम्

**४७. आद्यन्तौ टकितौ १।१।४६॥**

टित्कितौ यथासंख्येन आद्यन्तावयवौ भवतः। शिवच्छाया।

इति हल्सन्धिप्रकरणम्।

---

४२- मकारान्त पद के मकार के स्थान पर अनुस्वार होता है हल् के परे रहते।

४३- अपदान्त नकार और मकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश होता है झल् परे रहने पर।

४४- अनुस्वार का यय् प्रत्याहार के परे रहने पर परसवर्ण होता है।

४५- पदान्त में विद्यमान अनुस्वार का यय् प्रत्याहार के परे रहने पर विकल्प से परसवर्ण होता है।

४६- छकार के परे होने पर ह्रस्व को तुक् का आगम होता है।

४७- टित् और कित् आगम जिसको होते हैं, उसके क्रमशः आदि और अन्त में बैठते हैं।

इति हल्सन्धिप्रकरणम्

# अथ विसर्गसन्धिप्रकरणम्

अवसानसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

४८. विरामोऽवसानम् १।४।११०॥

वर्णानामभावोऽवसानं कथ्यते।

विसर्गविधायकं विधिसूत्रम्

४९. खरवसानयोर्विसर्जनीयः ८।३।१५॥

खरि परेऽवसाने च पदान्तरेफस्य विसर्गो भवति।

रामः करोति। हरिः।

सकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

५०. विसर्जनीयस्य सः ८।३।३४॥

खरि परे विसर्जनीयस्य स्थाने सकारादेशो भवति।

विष्णुस्त्राता।

रुत्वविधायकं विधिसूत्रम्

५१. स-सजुषो रुः ८।२।६६॥

पदान्तस्य सस्य सजुष्शब्दस्य षस्य च स्थाने रुर्भवति।

रुत्वविधायकं विधिसूत्रम्

५२. अतो रोरप्लुतादप्लुते ६।१।११३॥

अप्लुतादकारात्परस्य रोरुर्भवति अप्लुतेऽति।

शिवोऽर्च्यः।

---

४८- वर्णों के अभाव को अवसान कहते हैं।

४९- खर् परे रहने पर और अवसान में स्थित पदान्त रेफ को विसर्ग होता है।

५०- खर् परे रहने पर विसर्जनीय विसर्ग के स्थान पर सकारादेश होता है।

५१- पदान्त सकार और सजुष् शब्द के षकार के स्थान पर रु आदेश होता है।

५२- प्लुतभिन्न ह्रस्व अकार से परे रु के स्थान पर उकार आदेश होता है प्लुत भिन्न ह्रस्व अकार के परे रहने पर।

उत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**५३. हशि च ६।१।११४।।**

अप्लुतादकारात्परस्य रोरुर्भवति हशि परे।

शिवो वन्द्यः।

सुलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**५४. एतत्तदोः सुलोपोऽकोरनञ्समासे हलि ६।१।१३२।।**

अककारयोरेतत्तदोर्यः सुस्तस्य लोपो भवति हलि परे न तु नञ्समासे।

एष विष्णुः। स शम्भुः।

इति विसर्गसन्धिप्रकरणम्

---

५३- प्लुतभिन्न ह्रस्व अकार से परे रु के स्थान पर उकार आदेश होता है हश् के परे रहने पर।

५४- ककार रहित एतद् और तद् शब्द से परे सु का लोप होता है किन्तु नञ् समास में नहीं।

इति विसर्गसन्धिप्रकरणम्

# अथ अजन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्

प्रातिपदिकसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**५५. अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् १।२।४५।।**

धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वार्थवच्छब्दस्वरूपं प्रातिपदिकसंज्ञकं भवति।

प्रातिपदिकसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**५६. कृत्तद्धितसमासाश्च १।२।४६।।**

कृत्तद्धितप्रत्ययान्तौ समासाश्च प्रातिपदिकसंज्ञका भवन्ति।

अधिकारसूत्राणि त्रीणि

**५७. प्रत्ययः ३।१।१।।**

**५८. परश्च ३।१।२।।**

**५९. ङ्याप्प्रातिपदिकात् ४।१।१।।**

स्वादिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**६०. स्वौजसमौट्-छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्-ङसोसाम्-ङ्योस्सुप् ४।१।२।।**

ङीप्रत्ययान्तादाप्प्रत्ययान्तात् प्रातिपदिकसंज्ञकाच्च परे स्वादयः प्रत्यया भवन्ति।

सु औ जस् इति प्रथमा। अम् औट् शस् इति द्वितीया।

टा भ्याम् भिस् इति तृतीया। ङे भ्याम् भ्यस् इति चतुर्थी।

ङसि भ्याम् भ्यस् इति पञ्चमी। ङस् ओस् आम् इति षष्ठी।

ङि ओस् सुप् इति सप्तमी।

---

५५- धातु, प्रत्यय और प्रत्ययान्त को छोड़कर अर्थ वाले शब्द की प्रातिपदिकसंज्ञा होती है।

५६- कृदन्त, तद्धितप्रत्ययान्त और समास की प्रातिपदिकसंज्ञा होती है।

५७,५८,५९- ङी, आप् अर्थात् ङ्यन्त, आबन्त और प्रातिपदिक से परे प्रत्यय होते हैं।

६०- ङीप्रत्ययान्त, आप्प्रत्ययान्त और प्रातिपदिकसंज्ञक शब्द से परे स्वादि प्रत्यय होते हैं।

एकवचनादिसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**६१. सुपः १।४।१०३॥**

सुपस्त्रीणि त्रीणि वचनानि क्रमश एकवचनद्विवचनबहुवचनसंज्ञकानि भवन्ति।

एकवचन-द्विवचनविधायकं विधिसूत्रम्

**६२. द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने १।४।२२॥**

द्वित्वसंख्यायां द्विवचनम्, एकत्वसंख्यायाम् एकवचनं च भवतः।

एकशेषविधायकं विधिसूत्रम्

**६३. सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ १।२।६४॥**

एकविभक्तौ यानि सरूपाण्येव दृष्टानि तेषामेक एव शिष्यते।

पूर्वसवर्णविधायकं विधिसूत्रम्

**६४. प्रथमयोः पूर्वसवर्णः ६।१।१०२॥**

अकः प्रथमाद्वितीययोरचि पूर्वपरयोः स्थाने पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशो भवति।

पूर्वसवर्णदीर्घनिषेधकं विधिसूत्रम्

**६५. नादिचि ६।१।१०४॥**

अवर्णादिचि परे पूर्वसवर्णदीर्घो न भवति। रामौ।

बहुवचनविधायकं विधिसूत्रम्

**६६. बहुषु बहुवचनम् १।४।२१॥**

बहुत्वसंख्यायां बहुवचनं भवति।

इत्संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**६७. चुटू १।३।७॥**

प्रत्ययाद्यौ चवर्गटवर्गौ इत्संज्ञकौ भवतः।

---

६१- सुप् के तीन-तीन त्रिकों की क्रमशः एकवचन, द्विवचन, बहुवचन संज्ञा होती है।

६२- द्वित्वसंख्या और एकत्वसंख्या की विवक्षा होने पर क्रम से द्वित्वविवक्षा में द्विवचन और एकत्वविवक्षा में एकवचन होता है।

६३- एकविभक्ति में जितने भी समानस्वरूप दिखाई देते हैं, उन में से एक ही शेष रहता है।

६४- अक् से प्रथमा-द्वितीया विभक्ति सम्बन्धी अच् परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर दीर्घ एकादेश होता है।

६५- अवर्ण से अच् परे रहते पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेश नहीं होता है।

६६- प्रत्यय के आदि में स्थित चवर्ग और टवर्ग की इत्संज्ञा होती है।

६७- बहुत्वसंख्या की विवक्षा होने पर बहुवचन होता है।

विभक्तिसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ६८. विभक्तिश्च १।४।१०४।।

सुप्तिङौ विभक्तिसंज्ञौ भवतः।

इत्संज्ञानिषेधसूत्रम्

## ६९. न विभक्तौ तुस्माः १।३।४।।

विभक्तिस्थास्तवर्गसकारमकारा इत्संज्ञका न भवन्ति। रामाः।

सम्बुद्धिसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ७०. एकवचनं सम्बुद्धिः २।३।४९।।

सम्बोधने प्रथमाया एकवचनं सम्बुद्धिसंज्ञकं भवति।

अङ्गसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ७१. यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम् १।४।१३।।

प्रत्यये परे पूर्वं सर्वमङ्गसंज्ञकं भवति।

लोपविधायकं विधिसूत्रम्

## ७२. एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धेः ६।१।६९।।

एङन्ताद् ह्रस्वान्ताच्चाङ्गात्परं हल् लुप्यते सम्बुद्धेश्चेत्।

हे राम। हे रामौ। हे रामाः।

पूर्वरूपविधायकं विधिसूत्रम्

## ७३. अमि पूर्वः ६।१।१०७।।

अकोऽम्यचि परे पूर्वपरयोः स्थाने पूर्वरूपमेकादेशो भवति।

रामम्। रामौ।

---

६८- सुप् और तिङ् की विभक्तिसंज्ञा होती है।
६९- विभक्ति में स्थित तवर्ग, सकार और मकार की इत्संज्ञा नहीं होती है।
७०- सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति के एकवचन की सम्बुद्धिसंज्ञा होती है।
७१- प्रत्यय के परे रहने पर पूर्व में सम्पूर्ण प्रकृति की अङ्गसंज्ञा होती है।
७२- एङन्त अङ्ग और ह्रस्वान्त अङ्ग से परे सम्बुद्धि-हल् का लोप होता है।
७३- अक् से अम् सम्बन्धी अच् परे रहते पूर्व और पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है।

इत्संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**७४. लशक्वतद्धिते १।३।८।।**

तद्धितं विहाय प्रत्ययाद्या लशकवर्गा इत्संज्ञका भवन्ति।

नत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**७५. तस्माच्छसो नः पुंसि ६।१।१०३।।**

पूर्वसवर्णदीर्घात्परस्य शसः सस्य स्थाने नादेशो भवति पुंसि।

णत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**७६. अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि ८।४।२।।**

रेफषकाराभ्यां परस्य नकारस्य स्थाने णकारो भवति, अट्कवर्गपवर्गाङ्नुम्भिर्व्यवधाने सत्यसति च।

णत्वनिषेधसूत्रम्

**७७. पदान्तस्य ८।४।३७।।**

पदान्तनकारस्य णत्वं न भवति। रामान्।

इनात्स्यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**७८. टाङसिङसामिनात्स्याः ७।१।१२।।**

अदन्तात्परेषां टा-ङसि-ङसां स्थाने क्रमाद् इन-आत्-स्यादेशा भवन्ति। रामेण।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**७९. सुपि च ७।३।१०२।।**

अतोऽङ्गस्य दीर्घो भवति यञादौ सुपि परे। रामाभ्याम्।

.........................................................................................................

७४- तद्धित को छोड़कर प्रत्यय के आदि में स्थित लकार, शकार और कवर्ग की इत्संज्ञा होती है।

७५- पूर्वसवर्ण दीर्घ से परे जो दन्त्य-सकार उसके स्थान पर नकार आदेश होता है, पुँल्लिङ्ग में।

७६- रेफ व मूर्धन्य षकार से परे नकार के स्थान में णकार आदेश होता है अट्, कवर्ग, पवर्ग, आङ्, नुम् इनका व्यवधान हो या न हो।

७७- पदान्त नकार को णत्व नहीं होता है।

७८- अदन्त अङ्ग से परे टा, ङसि, ङस् के स्थान में क्रम से इन, आत्, स्य आदेश होते हैं।

७९- अदन्त अङ्ग को दीर्घ होता है, यञादि सुप् के परे रहते।

ऐसादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ८०. अतो भिस ऐस् ७।१।९॥

अदन्ताङ्गात्परस्य भिसः स्थाने ऐसादेशो भवति। रामैः।

यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ८१. ङेर्यः ७।१।१३॥

अदन्तादङ्गात्परस्य ङे इत्यस्य स्थाने यादेशो भवति।

स्थानिवद्भावविधायकम् अतिदेशसूत्रम्

## ८२. स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ १।१।५६॥

आदेशः स्थानिवद् भवति, अनल्विधौ। रामाय।

एत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## ८३. बहुवचने झल्येत् ७।३।१०३॥

अदन्ताङ्गस्य स्थाने एकारो भवति, झलादौ बहुवचने सुपि परे। रामेभ्यः।

चर्त्वविधायकं विधिसूत्रम्

## ८४ वावसाने ८।४।५६॥

अवसाने परे झलां स्थाने वा चरो भवन्ति।

रामात्, रामाद्। रामाभ्याम्। रामेभ्यः। रामस्य।

एत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## ८५. ओसि च ७।३।१०४॥

ओसि परेऽदन्ताङ्गस्यैकारो भवति। रामयोः।

नुडागमविधायकं विधिसूत्रम्

## ८६. ह्रस्वनद्यापो नुट् ७।१।५४॥

ह्रस्वान्तादाबन्तान्नद्यन्ताच्चाङ्गात्परस्यामो नुडागमो भवति।

---

८०- अदन्त अङ्ग से परे भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश होता है।

८१- अदन्त अङ्ग से पर ङे के स्थान पर यकार आदेश होता है।

८१- आदेश स्थानी जैसा होता है, अनल्विधि में।

८३- झलादि बहुवचन सुप् परे रहते अदन्त अङ्ग को एकार आदेश होता है।

८४- अवसान परे रहते झल् के स्थान में चर् विकल्प से होते हैं।

८५- ओस् परे रहते अदन्त अङ्ग को एकार आदेश होता है।

८६- ह्रस्वान्त, नद्यन्त और आबन्त अङ्ग से परे आम् को नुट् आगम होता है।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

## ८७. नामि ६।४।३॥

नामि परेऽजन्ताङ्गस्य दीर्घो भवति। रामाणाम्। रामे। रामयोः।

पत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## ८८. आदेशप्रत्यययोः ८।३।५९॥

इण्कवर्गाभ्यां परयोरपदान्तयोः प्रत्ययादेशयोः सकारस्य स्थाने षकारादेशो भवति। रामेषु।

एवं कृष्णादयोऽप्यदन्ताः शब्दाः।

सर्वनामसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ८९. सर्वादीनि सर्वनामानि १।१।२७॥

सर्वादिगणपठिताः शब्दाः सर्वनामसंज्ञका भवन्ति।

सर्व, विश्व, उभ, उभय, डतर, डतम, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्, त्व, नेम, सम, सिम।

पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम्।

स्वमज्ञातिधनाख्यायाम्।

अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः।

त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवतु, किम्।

---

८७- नाम् के परे रहने पर अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है।

८८- इण् प्रत्याहार और कवर्ग से परे पदान्त में स्थित न हो ऐसे आदेश के सकार या प्रत्यय वाले सकार के स्थान पर षकार आदेश होता है।

८९- सर्वादिगण में पठित शब्दों की सर्वनाम-संज्ञा होती है।

सर्वादिगण में ये शब्द आते हैं- सर्व, विश्व, उभ, उभय, डतर, डतम, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्. त्व, नेम, सम, सिम।

संज्ञाभिन्न व्यवस्था अर्थ में पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर इन शब्दों को सर्वादि माना जाता है।

ज्ञाति और धन से भिन्न अर्थ में स्वं-शब्द भी सर्वादि माना जाता है।

बाहर और पहनना अर्थ में अन्तर-शब्द भी सर्वादि माना गया है।

त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवतु, किम् ये शब्द भी सर्वादिगण में पठित हैं, अर्थात् ये भी सर्वनामसंज्ञक हैं।

शीविधायकं विधिसूत्रम्

## ९०. जसः शी ७।१।१७॥

सर्वनामसंज्ञकाददन्तात्परस्य जसः स्थाने शी भवति। सर्वे।

स्मैविधायकं विधिसूत्रम्

## ९१. सर्वनाम्नः स्मै ७।१।१४॥

सर्वनामसंज्ञकाददन्तात्परस्य ङे इत्यस्य स्थाने स्मै भवति। सर्वस्मै।

स्मात्स्मिन्नादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ९२. ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ ७।१।१५॥

सर्वनामसंज्ञकाददन्तात्परयोः ङसिङ्योः स्थाने क्रमेण 'स्मात्-स्मिनौ' इत्यादेशौ भवतः। सर्वस्मात्।

सुडागमविधायकं विधिसूत्रम्

## ९३. आमि सर्वनाम्नः सुट् ७।१।५२॥

सर्वनामसंज्ञकाददन्तात्परस्यामः सुडागमो भवति।

सर्वेषाम्। सर्वस्मिन्। शेषं रामवत्। हरिः। हरी।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

## ९४. जसि च ७।३।१०९॥

ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणो भवति जसि परे। हरयः।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

## ९५. ह्रस्वस्य गुणः ७।३।१०८॥

ह्रस्वस्य गुणो भवति सम्बुद्धौ। हे हरे। हरिम्। हरी। हरीन्।

---

९०- सर्वनामसंज्ञक अदन्तशब्द से परे जस् के स्थान पर शी आदेश होता है।
९१- सर्वनामसंज्ञक अदन्त से परे ङे के स्थान पर स्मै आदेश होता है।
९२- सर्वनामसंज्ञक अदन्त से परे ङसि और ङि के स्थान पर क्रम से स्मात् और स्मिन् आदेश होते हैं।
९३- सर्वनामसंज्ञक अदन्तशब्द से परे आम् को नुट् का आगम होता है।
९४- ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है जस् के परे रहने पर।
९५- ह्रस्व को गुण होता है सम्बुद्धि के परे रहने पर।

घिसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**९६. शेषो घ्यसखि १।४।७॥**

ह्रस्वेकारोकारौ घिसंज्ञकौ भवतः सखिशब्दं विना।

नादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**९७. आङो नास्त्रियाम् ७।३।१२०॥**

घिसंज्ञकशब्दात्परस्याङः स्थाने ना भवति स्त्रीलिङ्गं वर्जयित्वा।

हरिणा। हरिभ्याम्। हरिभिः।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

**९८. घेर्ङिति ७।३।१११॥**

घिसंज्ञकस्य ङिति सुपि परे गुणो भवति। हरये। हरिभ्याम्। हरिभ्यः।

पूर्वरूपविधायकं विधिसूत्रम्

**९९. ङसिङसोश्च ६।१।११०॥**

एङन्ताद् ङसिङसोरति पूर्वपरयोः स्थाने पूर्वरूपमेकादेशो भवति।

हरेः। हरेः। हर्योः। हरीणाम्।

अदादिविधायकं विधिसूत्रम्

**१००. अच्च घेः ७।३।११९॥**

इदुद्भ्यामुत्तरस्य ङि इत्यस्य स्थाने औत्, घिसंज्ञकस्याकारांन्तादेशश्च।

हरौ। हरिषु।

घिसंज्ञाविधायकं नियमसूत्रम्

**१०१. पतिः समास एव १।४।८॥**

पतिशब्दस्य समासे एव घिसंज्ञा भवति। पत्या। पत्ये

............................................................................................................

९६- ह्रस्व इकार और उकार की घि-संज्ञा होती है सखिशब्द को छोड़कर।

९७- घिसंज्ञकशब्द से परे आङ् के स्थान पर ना आदेश होता है स्त्रीलिंग को छोड़कर।

९८- घिसंज्ञक को गुण होता है ङित् सुप् के परे रहने पर।

९९- एङन्त शब्द से ङसि और ङस् सम्बन्धी ह्रस्व अकार के परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होता है।

१००- इकार और उकार से परे ङि के स्थान पर औकार आदेश और घिसंज्ञक वर्ण के स्थान अकार आदेश होता है।

१०१- पतिशब्द की समास में ही घिसंज्ञा होती है।

उत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## १०२. ख्यत्यात्परस्य ६।१।११२॥

कृतयणादेशाभ्यां खितिशब्दाभ्यां खीतीशब्दाभ्यां परस्य ङसिङसोरत उकारादेशो भवति। पत्युः।

औत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## १०३. औत् ७।३।११८॥

इदुद्भ्यामुत्तरस्य ङेरौत्। पत्यौ।

युष्मदस्मत्षट्संज्ञकाः शब्दाः त्रिषु लिङ्गेषु समानरूपा भवन्ति।

त्रिशब्दो नित्यं बहुवचनान्तः। त्रयः। त्रीन्। त्रिभिः। त्रिभ्यः।

त्रयादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## १०४. त्रेस्त्रयः ७।१।५३॥

त्रिशब्दस्य स्थाने त्रयादेशो भवति आमि परे। त्रयाणाम्। त्रिषु।

अत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## १०५. त्यदादीनामः ७।२।१०२॥

त्यदादिगणपठितानां शब्दानामकारान्तादेशो भवति विभक्तौ।

द्वौ। द्वाभ्याम्। द्वयोः। भानुशब्दो हरिवत्।

एवं शम्भ्वादय उकारान्ताः शब्दाः।

सर्वनामस्थानसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## १०६. सुडनपुंसकस्य १।१।४३॥

स्वादिपञ्चवचनानि सर्वनामस्थानसंज्ञकानि भवन्ति।

..........................................................................................

१०२- यण् आदेश हो चुका हो ऐसे ह्रस्व खि और ति तथा दीर्घ खी और ती से परे ङसि और ङस् के अकार के स्थान पर उकारादेश होता है।

१०३- ह्रस्व इकार और उकार से परे ङि के स्थान पर औकार आदेश होता है। युष्मत्, अस्मत् और षट्संज्ञक शब्द के तीनों लिङ्गों में समान रूप होते हैं। त्रि-शब्द सर्वदा मात्र बहुवचनान्त ही होता है।

१०४- त्रिशब्द के स्थान पर त्रय आदेश होता है, आम् परे रहने पर।

१०५- त्यदादिगण में पठित शब्दों के अन्त्यवर्ण के स्थान पर अकार आदेश होता है, विभक्ति के परे रहने पर।

१०६- सु आदि पाँच वचनों की सर्वनामस्थानसंज्ञा होती है।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

**१०७. ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः ७।३।११०॥**

ऋकारान्तस्याङ्गस्य गुणो भवति ङौ सर्वनामस्थाने च परे।

अनङादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१०८. ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसाञ्च ७।१।९४॥**

ऋदन्तानामुशनस्पुरुदंसोऽनेहसां शब्दानां चानङादेशो भवति, असम्बुद्धौ सौ।

सर्वादेशविधायकं परिभाषासूत्रम्

**१०९. अनेकाल् शित्सर्वस्य १।१।५५॥**

अनेकाल् शिच्चादेशौ सर्वस्य स्थाने भवतः।

अन्त्यादेशविधायकं परिभाषासूत्रम्

**११०. ङिच्च १।१।५३॥**

अनेकालपि ङिदादेशोऽन्त्यस्यैव स्थाने भवति।

उपधासंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१११. अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा १।१।६५॥**

अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञको भवति।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**११२. अप्तृन्तृच्स्वसृनप्तृनेष्टृत्वष्टृक्षत्तृहोतृपोतृप्रशास्तृणाम् ६।४।११॥**

अप्शब्दस्य तृन्तृच्प्रत्ययान्तानां स्वसृनप्तृनेष्टृत्वष्टृक्षत्तृहोतृपोतृप्रशास्तृ-शब्दानां चोपधाया दीर्घो भवति असम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने परे।

........................................................................................................

१०७- ऋकारान्त अङ्ग को गुण होता है, ङि और सर्वनामस्थान के परे रहने पर।

१०८- ह्रस्व ऋकारान्त शब्द, उशनस्, पुरुदंस्, अनेहस् शब्द को अनङ् आदेश होता है, सम्बुद्धि भिन्न सु के परे रहने पर।

१०९- अनेक अल् वाला आदेश और शित् आदेश सभी के स्थान पर होता है।

११०- अनेकाल् होने पर भी यदि आदेश ङित् है तो केवल अन्त्य के स्थान पर ही होता है।

१११- अन्त्य अल् से पूर्व के वर्ण की उपधासंज्ञा होती है।

११२- अप्शब्द, तृन्प्रत्ययान्तशब्द, तृच्प्रत्ययान्तशब्द तथा स्वसृ-नप्तृ-नेष्टृ-त्वष्टृ-क्षत्तृ-होतृ-पोतृ-प्रशास्तृ-शब्दों के उपधा को दीर्घ होता है सम्बुद्धिभिन्न सु के परे रहने पर।

अपृक्तसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**११३. अपृक्त एकाल् प्रत्ययः १।२।४१॥**

एकाल्प्रत्ययस्य अपृक्तसंज्ञा भवति।

सुलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**११४. हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् ६।१।६८॥**

हलन्ताद् ङ्यन्ताद् आबन्ताच्च परं सुतिसिसम्बन्धि अपृक्तं हल् लुप्यते।

नकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**११५. न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य ८।२।७॥**

प्रातिपदिकसंज्ञकपदस्यान्त्यनकारस्य लोपो भवति।

धाता। धातारौ। धातारः। धातारम्। धातारौ। धातॄन्। धात्रा। धातृभ्याम्। धातृभिः। धात्रे। धातृभ्यः।

उदेकादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**११६. ऋत उत् ६।१।१११॥**

ऋतो ङसिङसोरति उदेकादेशो भवति। धातुः।

**(वार्तिकम्) ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम्।**

**धातॄणाम्। धातरि। हे धातः।**

अप्तृन्तृच्सूत्रेणोणादिसिद्धानां तृन्तृच्प्रत्ययान्तानां शब्दानां दीर्घो न भवति। तेनेह न- पिता। पितरौ। पितरः।

इत्यजन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्।

---

११३- एक अल् जो प्रत्यय उसकी अपृक्तसंज्ञा होती है।

११४- हलन्त से परं, दीर्घ ङ्यन्त-शब्द से परे और दीर्घ आबन्त-शब्द से परे सु-ति-सि-सम्बन्धी अपृक्त हल् का लोप होता है।

११५- प्रातिपदिकसंज्ञक पद के अन्त में विद्यमान नकार का लोप होता है।

११६- ह्रस्व ऋकार से ङसि और ङस् सम्बन्धी ह्रस्व अकार के परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर ह्रस्व उकार एकादेश होता है।

वार्तिकार्थः- ऋवर्ण से परे नकार को णत्व होता है।

अप्तृन्तृच्0 सूत्र उणादिगण में हुए तृन्तृच्प्रत्ययान्त शब्दों को दीर्घ नहीं करता है। अतः पितरौ, पितरः आदि में दीर्घ नहीं हुआ।

इत्यजन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्।

# अथ अजन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम्

रमा।

शीविधायकं विधिसूत्रम्

**११७. औङ आपः ७।१।१८॥**

आबन्तादङ्गात्परस्यौकारस्य स्थाने शी भवति।

रमे। रमाः। रमाम्। रमे। रमाः।

एकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**११८. आङि चापः ७।३।१०५॥**

आङि ओसि च परे आबन्तस्याङ्गस्य स्थाने एकारादेशो भवति।

रमया। रमाभ्याम्। रमाभिः।

याडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**११९. याडापः ७।३।११३॥**

आबन्तादङ्गात्परस्य ङिद्विभक्तेर्याडागमो भवति।

रमायै। रमाभ्यः। रमायाः। रमयोः। रमाणाम्। रमायाम्। रमासु।

आमादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१२०. ङेराम्नद्याम्नीभ्यः ७।३।११६॥**

नद्यन्तादाबन्तान्नीशब्दाच्च परस्य ङेराम् भवति। रमायाम्।

..........................................................................................................

११७- आबन्त अङ्ग से पर औ-विभक्ति के स्थान पर शी आदेश होता है।

११८- आङ् और ओस् के परे रहने पर आबन्त अङ्ग के अन्त्य के स्थान पर एकार आदेश होता है।

११९- आबन्त अङ्ग से परे ङित् विभक्ति को याट् आगम होता है।

१२०- नदीसंज्ञक-शब्द, आबन्त-शब्द और नी-शब्द से परे ङि के स्थान पर आम् आदेश होता है।

एकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१२१. सम्बुद्धौ च ७।३।१०६॥**

आप एकारो भवति सम्बुद्धौ। हे रमे।

एवं दुर्गाम्बिकादय आबन्ताः स्त्रीलिङ्गाः शब्दाः।

स्याडागम-ह्रस्व-विधायकं विधिसूत्रम्

**१२२. सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च ७।३।११४॥**

सर्वनामसंज्ञकादाबन्तात्परस्य ङितः स्याट् स्याद्, आपश्च ह्रस्वः।

सर्वस्यै। सर्वस्याः। सर्वासाम्। सर्वस्याम्।

नदीसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१२३. यू स्त्र्याख्यौ नदी १।४।३॥**

नित्यस्त्रीलिङ्गौ ईदूदन्तौ नदीसंज्ञकौ भवतः।

नदी। नद्यौ। नद्यः। नदीम्। नदीः। नद्या। नदीभ्याम्। नदीभिः।

आडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१२४. आण्नद्याः ७।३।११२॥**

नद्यन्तात्परेषां ङितामाडागमो भवति।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**१२५. आटश्च ६।१।९०॥**

आटोऽचि परे पूर्वपरयोः स्थाने वृद्धिसंज्ञक एकादेशो भवति।

नद्यै। नदीभ्यः। नद्याः। नद्योः। नदीनाम्। नद्याम्। नदीषु।

.............................................................................................

१२१- आबन्त अङ्ग को एकार आदेश होता है सम्बुद्धि के परे रहने पर।

१२२- सर्वनामसंज्ञक आबन्त शब्द से परे ङित् विभक्ति को स्याट् आगम होता है और आप् को ह्रस्व भी होता है।

१२३- नित्य स्त्रीलिङ्ग ईकारान्त और ऊकारान्त शब्द की नदीसंज्ञा होती है।

१२४- नदीसंज्ञक शब्द से परे ङित् विभक्ति को आट् आगम होता है।

१२५- आट् से अच् परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक एकादेश होता हैं।

ह्रस्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१२६. अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः ७।३।१०७॥**

अम्बार्थकस्य नदीसंज्ञकस्य च ह्रस्वो भवति सम्बुद्धौ। हे नदि। ङ्यन्ताभावान्न सुलोपः, लक्ष्मीः। शेषं नदीवत्।

ङीप्विधायकं विधिसूत्रम्

**१२७. ऋन्नेभ्यो ङीप् ४।१।५॥**

ऋदन्तेभ्यो नान्तेभ्यश्च स्त्रियां ङीप्। धात्री, स्वामिनी नदीवत्।

षट्संज्ञाविधायके सूत्रे

**१२८. ष्णान्ता षट् १।१।२४॥**

**१२९. डति च १।१।२५॥**

षकारान्ता नकारान्ता डत्यन्तसंख्यासंज्ञकाश्च शब्दाः षट्संज्ञका भवन्ति।

ङीप्-टाप्-निषेधविधायकं विधिसूत्रम्

**१३०. न षट्स्वस्रादिभ्यः ४।१।१०॥**

षट्संज्ञकेभ्यः स्वस्रादिभ्यश्च ङीप्टापौ न भवतः।

**स्वस्रा तिस्रश्चतस्रश्च ननान्दा दुहिता तथा।**
**याता मातेति सप्तैते स्वस्रादय उदाहृताः॥**

स्वसा। स्वसारौ। माता पितृवत्। शसि मातॄः।

इत्यजन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम्।

---

१२६- अम्बार्थशब्द और नदीसंज्ञक शब्द को ह्रस्व होता है सम्बुद्धि के परे रहने पर।
१२७- ह्रस्व-ऋकारान्त और नकारान्त शब्दों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् होता है।
१२८-१२९- पकारान्त, नकारान्तशब्द और डतिप्रत्ययान्त-संख्यासंज्ञक शब्दों की षट्संज्ञा होती है।
१३०- पट्संज्ञक शब्द और स्वस्रादिगणपठित शब्दों से ङीप् आर टाप् नहीं होते हैं। स्वसृ, तिसृ, चतसृ, ननान्दृ, दुहितृ यातृ और मातृ ये शब्द स्वस्रादि हैं।

इति स्त्रीलिङ्गप्रकरणम्।

# अथ अजन्त-नपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

अमादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## १३१. अतोऽम् ७।१।२४॥

नपुंसकलिङ्गेऽदन्तादङ्गात् परयोः स्वमोरम् भवति। ज्ञानम्।

शी-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

## १३२. नपुंसकाच्च ७।१।१९॥

क्लीबात्परस्यौङः स्थाने शी भवति।

शि-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

## १३३. जश्शसोः शिः ७।१।२०॥

क्लीबात्परयोर्जश्शसोः स्थाने शिर्भवति।

सर्वनामस्थानसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## १३४. शि सर्वनामस्थानम् १।१।४२॥

'शि' इत्यस्य सर्वनामस्थानसंज्ञा भवति।

नुमागमविधायकं विधिसूत्रम्

## १३५. नपुंसकस्य झलचः ७।१।७२॥

क्लीबस्य झलन्तस्याजन्तस्य च नुमागमो भवति सर्वनामस्थाने।

परिभाषासूत्रम्

## १३६. मिदचोऽन्त्यात्परः १।१।४७॥

अचां मध्ये योऽन्त्यस्तस्मात्परस्तस्यैवान्तावयवो मिदागमो भवति।

.................................................................................................................

१३१- नपुंसकलिङ्ग में अदन्त अङ्ग से परे सु और अम् के स्थान पर अमादेश होता है।

१३२- नपुंसकलिङ्ग में जस् और शस् के स्थान में शि आदेश होता है।

१३३- नपुंसकलिङ्ग में औङ् के स्थान में शी आदेश होता है।

१३४- 'शि' इसकी सर्वनामस्थान संज्ञा होती है।

१३५- नपुंसकलिङ्गी झलन्त और अजन्त शब्दों को नुमागम होता है, सर्वनामस्थान परे रहते।

१३६- अचों के मध्य में जो अन्त्य अच् उस से परे उसका ही अन्तावयव होकर मित् आगम बैठता है।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**१३७. सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ ६।४।८।।**

नान्तस्योपधाया दीर्घो भवति असम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने परे।

ज्ञानानि। पुनस्तद्वत्। ज्ञानम्। ज्ञाने। ज्ञानानि। शेषं पुंवत्।

लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**१३८. स्वमोर्नपुंसकात् ७।१।२३।।**

क्लीबादङ्गात्परयोः स्वमोर्लुक्। वारि।

नुमागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१३९. इकोऽचि विभक्तौ ७।१।७३।।**

इगन्तस्य क्लीबस्य नुम् भवति अजादौ विभक्तौ।

वारिणी। वारीणि। वारिणा। वारिभ्याम्। वारिभिः। वारिणे। वारिणः।

वारिणोः। वारीणाम्। वारिणि। वारिषु। हे वारि।

इत्यजन्तनपुंसकलिङ्गप्रकरणम्।

......................................................................................................

१३७- नकारान्त उपधा को दीर्घ होता है, सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान परे रहते।

१३८- नपुंसकलिङ्ग में सु और अम् का लुक् होता है।

१३९- नपुंसकलिङ्गी इगन्त-शब्द को नुमागम होता है, अजादि विभक्ति के परे रहने पर।

इति नपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

# अथ हलन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्

ढत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१४०. हो ढः ८।२।३१॥**

हस्य स्थाने ढो भवति झलि पदान्ते च। लिट्, लिड्। लिहौ। लिहः।

पदसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१४१. स्वादिष्वसर्वनामस्थाने १।४।१७॥**

असर्वनामस्थानेषु स्वादिषु परतः यत्पूर्वं तत्पदसंज्ञकं भवति।

लिड्भ्याम्। लिड्भिः। लिड्भ्यः। लिट्सु।

आमागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१४२. चतुरनडुहोरामुदात्तः ७।१।९८॥**

चतुरनडुह्शब्दयोरामागमो भवति सर्वनामस्थाने परे।

नुमागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१४३. सावनडुहः ७।१।८२॥**

अनडुह्शब्दस्य नुमागमो भवति सौ परे।

अनड्वान्। अनड्वाहौ। अनड्वाहः। अनडुहः।

दत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१४४. वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः ८।२।७२॥**

सान्तवस्वन्तस्य स्रंसादेश्च स्थाने दकारादेशो भवति पदान्ते।

अनडुद्भ्याम्। अनडुद्भिः।

---

१४०- हकार के स्थान पर ढकार होता है झल् परे रहने पर या पदान्त में।

१४१- सर्वनामस्थानभिन्न स्वादि प्रत्यय के परे रहने पर पूर्व की पदसंज्ञा होती है।

१४२- चतुर् और अनडुह् शब्द को आम् का आगम होता है, सर्वनामस्थान के परे रहते।

१४३- अनडुह् शब्द को नुम् आगम होता है, सु के परे होने पर।

१४४- सकारान्त वसु-शब्द, स्रंस्, ध्वंस्, अनडुह् शब्द के पदान्त सकार के स्थान पर दकार आदेश होता है।

अमागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१४५. अम् सम्बुद्धौ ७।१।९९॥**

अनडुह्शब्दस्य अमागमो भवति सम्बुद्धौ। हे अनड्वन्।

चत्वारः। चतुरः। चतुर्भिः। चतुर्भ्यः।

नुडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१४६. षट्चतुर्भ्यश्च ७।१।५५॥**

षट्संज्ञकेभ्यश्चतुर्भ्यश्च परस्यामो नुडागमो भवति।

णत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१४७. रषाभ्यां नो णः समानपदे ८।४।१॥**

रेफषकाराभ्यां परस्य नस्य णो भवति, समानपदे। चतुर्णाम्। चतुर्षु।

कादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१४८. किमः कः ७।२।१०३॥**

किमः स्थाने कादेशो भवति, विभक्तौ। कः। कौ। के। शेषं सर्ववत्।

मादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१४९. इदमो मः ७।२।१०८॥**

इदमो मस्य स्थाने म एव भवति सौ परे। त्यदाद्यत्वापवादः।

अयादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१५०. इदोऽय् पुंसि ७।२।१११॥**

इदम इदः स्थानेऽयादेशो भवति सौ परे, पुंसि। अयम्।

---

१४५- अनडुह्-शब्द को अम् का आगम होता है सम्बुद्धि के परे रहने पर।

१४६- षट्संज्ञक-शब्द और चतुर्-शब्द से परे आम् को नुडागम होता है।

१४७- रेफ और मूर्धन्य षकार से परे नकार को णकारादेश होता है, एकपद होने पर।

१४८- किम्-शब्द के स्थान पर 'क' आदेश होता है, विभक्ति के परे होने पर।

१४९- इदम्-शब्द के म के स्थान पर मकारादेश ही होता है, सु परे रहते।

१५०- इदम्-शब्द के इद् के स्थान पर अय् आदेश होता है सु के परे रहने पर, पुँल्लिङ्ग में।

परस्पविधायकं विधिसूत्रम्

**१५१. अतो गुणे ६।१।९७॥**

अपदान्तादतो गुणे परे पूर्वपरयोः स्थाने पररूपमेकादेशो भवति।

मकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१५२. दश्च ७।२।१०९॥**

इदमो दस्य स्थाने मकारादेशो भवति विभक्तौ।

इमौ। इमे। इमम्। इमान्।

अनादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१५३. अनाप्यकः ७।२।११२॥**

ककाररहितस्येदम इदः स्थानेऽनादेशो भवति आपि विभक्तौ।

आबिति प्रत्याहारः। अनेन।

लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**१५४. हलि लोपः ७।२।११३॥**

ककाररहितस्य इदम इदो लोपो भवति आपि हलादौ। आभ्याम्।

ऐसादेशनिषेधकं विधिसूत्रम्

**१५५. नेदमदसोरकोः ७।१।११॥**

ककाररहितयोदिममदसोर्भिसः स्थाने ऐस् न भवति।

एभिः। अस्मै। एभ्यः। अस्मात्। अस्य। अनयोः। एषाम्। अस्मिन्। एषु।

त्यदादीनां स्वभावतः सम्बोधनं न भवति।

---

१५१- अपदान्त अकार से गुण के परे रहने पर पूर्व और पर के स्थान पर पररूप एक आदेश होता है।

१५२- इदम्-शब्द के दकार के स्थान पर मकार आदेश होता है विभक्ति के परे रहने पर।

१५३- अकच्-प्रत्यय वाले ककार से रहित इदम्-शब्द के इद्-भाग के स्थान पर 'अन' ऐसा आदेश होता है।

१५४- अकच्-प्रत्यय के ककार से रहित इदम्-शब्द के इद्-भाग का लोप होता है हलादि आप् के परे रहने पर।

१५५- अकच् के ककार से रहित इदम् और अदस् शब्दों से परे भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश नहीं होता है।

त्यदादिगणीय शब्दों में स्वाभाविक रूप से सम्बोधन नहीं होता है।

अकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**१५६. अल्लोपोऽनः ६।४।१३४॥**

अङ्गावयवोऽसर्वनामस्थानयजादिस्वादिपरको योऽन् तस्याकारस्य लोपो भवति।

ज्ञ्-संयोगे ज्ञः। राज्ञः। राज्ञा।

नलोपासिद्धविधायकं नियमसूत्रम्

**१५७. नलोपः सुप्स्वरसंज्ञातुग्विधिषु कृति ८।२।२॥**

सुब्विधौ स्वरविधौ संज्ञाविधौ कृति तुग्विधौ च नलोपोऽसिद्धो भवति।

इत्यसिद्धत्वादात्वमेत्वमैस्त्वं च न।

राजभ्याम्। राजभिः। राज्ञे। राजभ्यः। राज्ञः। राज्ञोः। राज्ञाम्।

वैकल्पिक-अकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**१५८. विभाषा ङिश्योः ६।४।१३६॥**

अङ्गावयवोऽसर्वनामस्थानयजादिस्वदिपरको योऽन् तस्याकारस्य वा लोपो भवति ङिश्योः परयोः। राज्ञि, राजनि।

नलोपनिषेधकं विधिसूत्रम्

**१५९. न ङिसम्बुद्ध्योः ८।२।८॥**

ङौ सम्बुद्धौ च नकारलोपो न भवति। हे राजन्।

यज्वा। यज्वानौ। यज्वानः।

.......................................................................................................

१५६- असर्वनामस्थान यकारादि, अजादि अथवा स्वादि परे रहने पर अङ्गसंज्ञक का अवयव जो अन्, उसके अकार का लोप होता है।

ज् और ञ् का संयोग होने पर ज्ञ् हो जाता है।

१५७- सुप् की विधि, स्वर की विधि, संज्ञा की विधि और कृत् के परे रहने पर तुक् आगम की विधि करने पर नकार का लोप असिद्ध होता है।

नकार का लोप असिद्ध होने से आत्व, एत्व और ऐस्त्व नहीं होंगे।

१५८- असर्वनामस्थान यकारादि, अजादि अथवा स्वादि परे रहने पर अङ्गसंज्ञक का अवयव जो अन्, उसके अकार का विकल्प से लोप होता है ङि और शी के परे रहने पर।

१५९- ङि और सम्बुद्धि के परे रहने पर नकार का लोप नहीं होता है।

अकारलोपनिषेधकं विधिसूत्रम्

**१६०. न संयोगाद्वमन्तात् ६।४।१३७॥**

वकारमकारान्तसंयोगात् परस्यानोऽकारस्य लोपो न भवति।
यज्वनः। यज्वभ्याम्। ब्रह्मणः। ब्रह्मणा। ब्रह्मभ्याम्।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**१६१. सौ च ६।४।१३॥**

इन्नन्तानां हन्-पूषन्-अर्यमन्-शब्दानामसम्बुद्धौ सौ परे एव उपधाया दीर्घो भवति नान्यत्र। योगी। योगिनौ। योगिनः। ज्ञानी। ज्ञानिनौ। ज्ञानिनः।

सत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१६२. तदोः सः सावनन्त्ययोः ७।२।१०६॥**

त्यदादीनामनन्त्यतकार-दकारयोः स्थाने सकारादेशो भवति सौ परे।
स्यः। त्यौ। त्ये। सः। तौ। ते। तम्। यः। यौ। ये। एषः। एतौ। एते।

नुमागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१६३. उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः ७।१।७०॥**

अधातोरुगितो नलोपिनोऽञ्चतेश्च नुमागमो भवति सर्वनामस्थाने परे।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**१६४. सान्त-महतः संयोगस्य ६।४।१०॥**

सान्तसंयोगस्य महतश्च यो नकारस्तस्योपधाया दीर्घो भवति असम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने परे। महान्। महान्तौ। महान्तः। महद्भ्याम्। हे महन्।

---

१६०- वकारान्त संयोग और मकारान्त संयोग से परे अन् के अकार का लोप नहीं होता है।

१६१- इन् अन्त में हो ऐसे शब्द और हन्-शब्दान्त, पूषन्, अर्यमन् के अङ्गों की उपधाया को सम्बुद्धि-भिन्न सु के परे रहने पर ही दीर्घ हो, अन्य विभक्तियों के परे नहीं।

१६२- त्यदादि गण में पठित शब्दों के अनन्त्य तकार और दकार के स्थान पर सकार आदेश होता है सु के परे रहने पर।

१६३- सर्वनामस्थान के परे होने पर धातुभिन्न उगित् का तथा जिस के नकार का लोप हुआ हो, ऐसे अञ्चु धातु को नुम् का आगम होता है।

१६४- सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान के परे होने पर सकारान्त संयोग तथा महत् शब्द के नकार की उपधा को दीर्घ हो जाता है।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**१६५. अत्वसन्तस्य चाधातोः ६।४।१४॥**

अत्वन्तस्योपधाया धातुभिन्नासन्तस्य च दीर्घो भवति असम्बुद्धौ सौ। धीमान्। धीमन्तौ। धीमन्तः। शसादौ महद्वत्।

इति हलन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्।

---

१६५- सम्बुद्धिभिन्न सु के परे होने पर अतु जिस के अन्त में हो, उसकी उपधा को और अस् अन्त में हो ऐसे धातुभिन्न शब्द की उपधा को दीर्घ होता है।

इति हलन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्।

# अथ हलन्त-स्त्रीलिङ्गप्रकरणम्

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**१६६. र्वोरुपधाया दीर्घ इकः ८।२।७६॥**

रेफवान्तयोर्धातोरुपधाया इको दीर्घो भवति पदान्ते।

गीः। गिरौ। गीर्भ्याम्। पूः। पुरौ। पुरः। पूर्भ्याम्। का। के। काः।
स्या। त्ये। त्याः। एषा। एते। एताः। सा। ते। ताः। या। ये। याः।

यकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१६७. यः सौ ७।२।११०॥**

सौ परे इदमो दस्य स्थाने यकारादेशो भवति।

इयम्। इमे। इमाः। अनया। आभ्याम्। आभिः। अस्यै। आभ्यः। अस्याः।
आसाम्। अस्याम्। आसु।

कुत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१६८. चोः कुः ८।२।३०॥**

पदान्ते झलि च चवर्गस्य स्थाने कवर्गादेशो भवति।

वाक्, वाग्। वाचौ। वाचः। वाचा। वाग्भ्याम्। वाचाम्। वाक्षु।

इति हलन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम्।

---

१६६- पदान्त में रेफान्त और वकारान्त धातु की उपधा को दीर्घ होता है।
१६७- सु के परे होने पर इदम्-शब्द के दकार के स्थान पर यकार आदेश होता है।
१६७- पदान्त में या झल् परे होने पर चवर्ग के स्थान पर कवर्ग आदेश होता है।

इति हलन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम्।

# अथ हलन्तनपुंसकलिँङ्गप्रकरणम्

वाः। वारी। वारि। वार्भ्याम्।
चत्वारि। किम्। के। कानि।
इदम्। इमे। इमानि।
दण्डि। दण्डिनी। दण्डीनि।
तत्। ते। तानि। यत्। ये। यानि।
पयः। पयसी। पयांसि।
मनः। मनसी। मनांसि।

इति हलन्तनपुंसकलिङ्गप्रकरणम्।

# अथ-अव्ययप्रकरणम्

अव्ययसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१६९. स्वरादिनिपातमव्ययम् १।१।३७॥**

स्वरादयो निपाताश्च अव्ययसंज्ञका भवन्ति।

**स्वरादयः-**

स्वर्। अन्तर्। प्रातर्। पुनर्। सनुतर्। उच्चैस्। नीचैस्। शनैस्। ऋधक्। ऋते। युगपत्। आरात्। पृथक्। ह्यस्। श्वस्। दिवा। रात्रौ। सायम्। चिरम्। मनाक्। ईषत्। जोषम्। तूष्णीम्। बहिस्। अवस्। समया। निकषा। स्वयम्। वृथा। नक्तम्। नञ्। हेतौ। इद्धा। अद्धा। सामि। वत्। ब्राह्मणवत्। क्षत्रियवत्। सना। सनत्। सनात्। उपधा। तिरस्। अन्तरा। अन्तरेण। ज्योक्। कम्। शम्। सहसा। विना। नाना। स्वस्ति। स्वधा। अलम्। वषट्। श्रौषट् वौषट्। अन्यत्। अस्ति। उपांशु। क्षमा। विहायसा। दोषा। मृषा। मिथ्या। मुधा। पुरा। मिथो। मिथस्। प्रायस्। मुहुस्। प्रवाहुकम्। प्रवाहिका। आर्यहलम्। अभीक्ष्णम्। साकम्। सार्धम्। नमस्। हिरुक्। धिक्। अथ। अम्। आम्। प्रताम्। प्रशान्। प्रतान्। मा। माङ्। (आकृतिगणोऽयम्)

**निपाताः-** च। वा। ह। अह। एव। एवम्। नूनम्। शश्वत्। युगपत्। भूयस्। कूपत्। कुवित्। नेत्। चेत्। चण्। कच्चित्। यत्र। नह। हन्त। माकिः। माकिम्। नकिः। नकिम्। माङ्। नञ्। यावत्। तावत्। त्वै। द्वै। न्वै। रै। श्रौषट्। वौषट्। स्वाहा। स्वधा। वषट्। तुम्। तथाहि। खलु। किल। अथो। अथ। सुष्ठु। स्म। आदह।

**वार्तिकम्- उपसर्गविभक्तिस्वरप्रतिरूपकाश्च।** अवदत्तम्। अहंयुः। अस्तिक्षीरा। अ। आ। इ। ई। उ। ऊ। ए। ऐ। ओ। औ। पशु। शुकम्। यथाकथाच। पाट्। प्याट्। अङ्ग। है। हे। भोः। अये। द्य। विषु। एकपदे। युत्। आतः। **चादिराकृतिगणः।**

---

**१६९-** स्वर् आदि गण में पठित शब्द और निपात की अव्ययसंज्ञा होती है।

**वार्तिकार्थः-** उपसर्गप्रतिरूपक, विभक्तिप्रतिरूपक और स्वरप्रतिरूपक का पाठ चादि में होता है।

अव्ययसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१७०. तद्धितश्चासर्वविभक्तिः १।१।३८॥**

यस्मात्सर्वा विभक्तयो न भवन्ति तादृशस्तद्धितान्तशब्दोऽव्ययसंज्ञको भवति। परिगणनं कर्तव्यम्- तसिलादयः प्राक्पाशपः। शस्प्रभृतयः प्राक्समासान्तेभ्यः। अम्। आम्। कृत्वोऽर्थाः। तसिवतिप्रत्ययान्तौ। नानाञौ।

अव्ययसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१७१. कृन्मेजन्तः १।१।३९॥**

कृद्यो मान्त एजन्तश्च, तदन्तशब्दा अव्ययसंज्ञका भवन्ति।
स्मारं स्मारम्। जीवसे। पिबध्यै।

अव्ययसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१७२. क्त्वातोसुन्कसुनः १।१।४०॥**

क्त्वा-तोसुन्-कसुन्प्रत्ययान्ताः शब्दा अव्ययसंज्ञका भवन्ति।
कृत्वा। उदेतोः। विसृपः।

अव्ययसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१७३. अव्ययीभावश्च १।१।४१॥**

अव्ययीभावसमासोऽपि अव्ययसंज्ञको भवति। अधिहरि।

लुग्-विधायकं विधिसूत्रम्

**१७४. अव्ययादाप्सुपः २।४।८२॥**

अव्ययाद्विहितस्यापः सुपश्च लुग्भवति। तत्र। कृत्वा। विना।

**सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु।**
**वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्॥**

इत्यव्ययप्रकरणम्।

---

१७०- जिससे सारी विभक्तियाँ नहीं होती हैं ऐसे तद्धित-प्रत्ययान्त शब्दों की अव्ययसंज्ञा होती है।

१७१- कृत्प्रकरण के मकारान्त और एजन्त शब्दों की अव्ययसंज्ञा होती है।

१७२- क्त्वाप्रत्ययान्त, तोसुन्प्रत्ययान्त और कसुन्प्रत्ययान्त शब्द अव्ययसंज्ञक होते हैं।

१७३- अव्ययीभाव समास वाले शब्द की अव्ययसंज्ञा होती है।

१७४- अव्ययसंज्ञक शब्दों से विहित आप् और सुप् का लुक् होता है।

श्लोकार्थः- जो तीनों लिङ्गों में, सभी विभक्तियों में और सभी वचनों में विकार को प्राप्त नहीं होता है, एक जैसा ही रहता है अर्थात् नहीं बदलता है, वह अव्यय है।



इत्यव्ययप्रकरणम्।

# अथ तिङन्ते भ्वादिप्रकरणम्

लकाराः- लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्।
एषु लेट्लकारो वेदेषु एव प्रयुज्यते।

धातुविषयकं विधिसूत्रम्

**१७५. लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः ३।४।६९॥**

लकाराः सकर्मकेभ्यो धातुभ्यः कर्मणि कर्तरि चार्थे, अकर्मकधातुभ्यो भावे कर्तरि चार्थे भवन्ति।

लट्-लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**१७६. वर्तमाने लट् ३।२।१२३॥**

वर्तमाने धातोर्लट् भवति। भू सत्तायाम्।

लकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१७७. तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिब्-वस्-मस्-ताताम्-झ-थासाथाम्-ध्वमिड्-वहि-महिङ् ३।४।७८॥**

लकाराणां स्थाने एतेऽष्टादश आदेशा भवन्ति।

परस्मैपदसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१७८. लः परस्मैपदम् १।४।९९॥**

लादेशीभूतास्तिबादयः परस्मैपदसंज्ञका भवन्ति।

.................................................................................................

१७५- सकर्मकधातुओं से कर्ता और अर्थ में और अकर्मकधातुओं से भाव और कर्म अर्थ में लकार होते हैं।

१७६- वर्तमान अर्थ में धातु से लट् लकार होता है।

१७७- लकार के स्थान पर ''तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस्, त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इट्, वहि, महिङ्'' ये अठारह आदेश होते हैं।

१७८- लकार के स्थान पर आदेश हुए तिप् आदि की परस्मैपद संज्ञा होती है।

आत्मनेपदसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१७९. तङानावात्मनेपदम् १।४।१००॥**

तङ्प्रत्याहारः शानच्कानचौ च प्रत्ययौ आत्मनेपदसंज्ञका भवन्ति। पूर्वसंज्ञापवादः।

आत्मनेपदविधायकं विधिसूत्रम्

**१८०. अनुदात्तङित आत्मनेपदम् १।३।१२॥**

अनुदात्तेत्संज्ञकधातोर्ङिद्धातोश्च आत्मनेपदप्रयोगो भवति।

उभयपदविधायकं विधिसूत्रम्

**१८१. स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले १।३।७२॥**

स्वरितेत्संज्ञकधातोर्ञिद्धातोश्च आत्मनेपदप्रयोगो भवति, यदि क्रियाफलं कर्तरि गच्छति चेद्, अन्यथा परस्मैपदम्।

परस्मैपदविधायकं विधिसूत्रम्

**१८२. शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् १।३।७८॥**

आत्मनेपदनिमित्तहीनाद्धातोः कर्तरि परस्मैपदप्रयोगो भवति।

प्रथमादिपुरुषसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१८३. तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः १।४।१०१॥**

तिङ उभयोः पदयोस्त्रयस्त्रिकाः क्रमात् प्रथम-मध्यमोत्तमपुरुषसंज्ञका भवन्ति।

मध्यमपुरुषविधायकं विधिसूत्रम्

**१८४. युष्मदि (उपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि) मध्यमः १।४।१०५॥**

युष्मच्छब्दमात्रप्रयोगेऽप्रयोगे च मध्यमपुरुषो भवति।

---

१७९- तङ् प्रत्याहार और शानच् कानच् प्रत्ययों की आत्मनेपदसंज्ञा होती है।

१८०- जिस धातु में अनुदात्त की या ङकार की इत्संज्ञा हुई हो, ऐसे धातु से आत्मनेपद का प्रयोग होता है।

१८१- जिस धातु में स्वरित की या ञकार की इत्संज्ञा हुई हो, ऐसे धातु से आत्मनेपद का प्रयोग होता है यदि क्रिया का फल कर्ता को प्राप्त हो रहा हो तो, अन्यथा परस्मैपद का प्रयोग होता है।

१८२- जिस धातु में आत्मनेपद का निमित्त न हो ऐसे धातु से परस्मैपद का विधान होता है।

१८३- तिङ् के दोनों पदों के तीन-तीन त्रिक की क्रम से प्रथमपुरुष, मध्यमपुरुष और उत्तमपुरुषसंज्ञा होती है।

१८४- मात्र युष्मत्-शब्द के प्रयोग होने पर या प्रयोग की सम्भावना होने पर मध्यमपुरुष का प्रयोग होता है।

उत्तमपुरुषविधायकं विधिसूत्रम्

**१८५. अस्मद्युत्तमः १।४।१०७॥**

अस्मच्छब्दमात्रप्रयोगेऽप्रयोगे च उत्तमपुरुषो भवति।

प्रथमपुरुषविधायकं विधिसूत्रम्

**१८६. शेषे प्रथमः १।४।१०८॥**

मध्यमोत्तमयोरविषये प्रथमपुरुषो भवति।

सार्वधातुकसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१८७. तिङ्शित्सार्वधातुकम् ३।४।११३॥**

धातोर्विहितास्तिङः शितश्च सार्वधातुकसंज्ञका भवन्ति।

शप्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**१८८. कर्तरि शप् ३।१।६८॥**

कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे धातोः शप्-प्रत्ययो भवति।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

**१८९. सार्वधातुकार्धधातुकयोः ७।३।८४॥**

सार्वधातुकार्धधातुकयोः परयोरिगन्ताङ्गस्य गुणो भवति।

भवति। भवतः।

अन्तादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**१९०. झोऽन्तः ७।१।३॥**

प्रत्ययावयवस्य 'झ्' इत्यस्य स्थाने 'अन्त्' इत्यादेशो भवति।

भवन्ति। भवसि। भवथः। भवथ।

---

१८५- मात्र अस्मत्-शब्द के प्रयोग में या प्रयोग की सम्भावना में उत्तमपुरुष होता है।

१८६- मध्यम और उत्तमपुरुष का विषय न रहने पर प्रथम-पुरुष होता है।

१८७- धातु से विधान किये गये तिङ् और शित् प्रत्ययों की सार्वधातुकसंज्ञा होती है।

१८८- कर्ता अर्थ में जो सार्वधातुक, उसके परे रहते धातु से शप्-प्रत्यय होता है।

१८९- सार्वधातुक और आर्धधातुक के परे रहते इगन्त अङ्ग को गुण होता है।

१९०- प्रत्यय के अवयव झ् के स्थान पर अन्त् आदेश होता है।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**१९१. अतो दीर्घो यञि ७।३।१०१॥**

अदन्ताङ्गस्य दीर्घो भवति यञादौ सार्वधातुके परे।

भवामि। भवावः। भवामः। स भवति। तौ भवतः। ते भवन्ति। त्वं भवसि। युवां भवथः। यूयं भवथ। अहं भवामि। आवां भवावः। वयं भवामः।

लिट्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**१९२. परोक्षे लिट् ३।२।११५॥**

भूतानद्यतनपरोक्षार्थे धातोर्लिट्-लकारो भवति।

णलाद्यादेशविधायकं विधिसूसूत्रम्

**१९३. परस्मैपदानां णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः ३।४।८२॥**

लिटस्तिबादीनां नवानां स्थाने णलादय आदेशा भवन्ति।

वुगागमविधायकं विधिसूत्रम्

**१९४. भुवो वुग् लुङ्लिटोः ६।४।८८॥**

भुवो वुगागमो भवति लुङ्लिटोरचि परे।

द्वित्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१९५. लिटि धातोरनभ्यासस्य ६।१।८॥**

लिटि परेऽनभ्यासस्य धातोर्द्वित्वं भवति।

अभ्याससंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**१९६. पूर्वोऽभ्यासः ६।१।४॥**

षष्ठाध्याये कृते द्वित्वे पूर्वस्याभ्याससंज्ञा भवति।

हलादिशेषविधायकं विधिसूत्रम्

**१९७. हलादिः शेषः ७।४।६०॥**

अभ्यासस्यादिर्हल् शिष्यते, अन्ये हलो लुप्यन्ते।

..................................................................................................................

१९१- अदन्त अङ्ग को दीर्घ होता है यञादि सार्वधातुक के परे रहने पर।

१९२- भूत, अनद्यतन, परोक्ष काल में धातु से लिट् लकार होता है।

१९३- लिट् के स्थान पर आदेश हुए तिप् आदि नौ के स्थान पर णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, अ, णल्, व, म ये नौ आदेश होते हैं।

१९४- भू-धातु को वुक् आगम होता है लुङ् और लिट् सम्बन्धी अच् के परे होने पर।

१९५- लिट् के परे होने पर अभ्यास-रहित धातु को द्वित्व होता है।

१९६- छठवें अध्याय में द्वित्व होने पर पूर्व की अभ्याससंज्ञा होती है।

१९७- अभ्यास का आदि हल् शेष रहता है और अन्य हलों का लोप होता है।

ह्रस्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१९८. ह्रस्वः ७।४।५९॥**

अभ्यासस्याचो ह्रस्वो भवति।

अत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**१९९. भवतेरः ७।४।७३॥**

भूधातोरभ्यासोकारस्य स्थाने अकारादेशो भवति लिटि परे।

चर्त्वविधायकं विधिसूत्रम्

**२००. अभ्यासे चर्च ८।४।५४॥**

अभ्यासे झशां स्थाने जशः, खयां स्थाने चरो भवन्ति।

बभूव। बभूवतुः। बभूवुः।

आर्धधातुकसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२०१. लिट् च ३।४।११५॥**

लिटः स्थाने भूतस्य तिङ आर्धधातुकसंज्ञा भवति।

इडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२०२. आर्धधातुकस्येड्वलादेः ७।२।३५॥**

वलादेरार्धधातुकस्येडागमो भवति।

बभूविथ। बभूवथुः। बभूव। बभूव। बभूविव। बभूविम।

लुट्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२०३. अनद्यतने लुट् ३।३।१५॥**

अनद्यतने भविष्यति धातोर्लुट्-लकारो भवति।

स्यतासिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**२०४. स्यतासी लृलुटोः ३।१।३३॥**

धातोः 'स्य-तासि' एतौ प्रत्ययौ भवतो लृलुटोः परयोः। शबाद्यपवादः।

.................................................................................................

१९८- अभ्यास के अच् को ह्रस्व होता है।

१९९- भूधातु के अभ्यास के उकार के स्थान पर अकार आदेश होता है लिट् के परे होने पर।

२००- अभ्यास में झश् के स्थान पर जश् और खय् के स्थान चर् आदेश होता है।

२०१- लिट् लकार के स्थान पर आदेश हुए तिङ् की आर्धधातुकसंज्ञा होती है।

२०२- वल् आदि में हो ऐसे आर्धधातुक को इट् का आगम होता है।

२०३- अनद्यतन भविष्यत् काल में धातु से लुट् लकार होता है।

२०४- धातु से स्य और तासि प्रत्यय होते हैं, लृङ्, लृट् और लुङ् लकार के परे रहने पर।

आर्धधातुकसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२०५. आर्धधातुकं शेषः ३।४।११४॥**

धातोर्विहितास्तिङ्शिद्भिन्नाः प्रत्यया आर्धधातुकसंज्ञका भवन्ति।

डारौरसादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२०६. लुटः प्रथमस्य डारौरसः २।४।८५॥**

लुटः प्रथमपुरुषस्य स्थाने 'डा-रौ-रस्' आदेशा भवन्ति।

टिसंज्ञाविधायकं विधिसूत्रम्

**२०७. अचोऽन्त्यादि टि १।१।६४॥**

अचां मध्ये योऽन्त्यस्तदादिस्वरूपस्य टिसंज्ञा भवति।

भसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२०८. यचि भम् १।४।१८॥**

असर्वनामस्थानेषु यकारादिषु अजादिषु च स्वादिषु परतः यत्पूर्वं तद् भसंज्ञकं भवति।

टिलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२०९. टेः ६।४।१४३॥**

डिति भस्य टेर्लोपो भवति। **डित्वसामर्थ्यादभस्यापि टेर्लोपः**। भविता।

सकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२१०. तासस्त्योर्लोपः ७।४।५०॥**

तासेः अस्धातोश्च सकारस्य लोपो भवति सादौ प्रत्यये परे।

सकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२११. रि च ७।४।५१॥**

तासेः, अस्धातोश्च सकारस्य लोपो भवति रादौ प्रत्यये परे। भवितारौ। भवितारः। भवितासि। भवितास्थः। भवितास्थ। भवितास्मि। भवितास्वः। भवितास्मः।

---

२०५- धातु से किये गये तिङ् और शित् भिन्न प्रत्ययों की आर्धधातुकसंज्ञा होती है।
२०६- लुट्-लकार के प्रथमपुरुष के स्थान पर क्रमशः 'डा, रौ, रस्' आदेश होते हैं।
२०७- अचों के मध्य में अन्त्य अच् और तदादिस्वरूप की टिसंज्ञा होती है।
२०८- असर्वनामस्थान यकारादि या अजादि स्वादि के परे रहने पर पूर्व की भसंज्ञा होती है।
२०९- डित् के परे रहने पर भसंज्ञक टि का लोप होता है।
२१०- तासि प्रत्यय और अस्-धातु के सकार का लोप होता है सकारादि प्रत्यय के परे होने पर।
२११- तासि प्रत्यय और अस्-धातु के सकार का लोप होता है रकारादि प्रत्यय के परे होने पर।

लृट्-लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२१२. लृट् शेषे च ३।३।१३॥**

सामान्ये भविष्यति काले धातोर्लृट्-लकारो भवति।

भविष्यति। भविष्यतः। भविष्यन्ति। भविष्यसि। भविष्यथः। भविष्यथ। भविष्यामि। भविष्यावः। भविष्यामः।

लोट्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२१३. लोट् च ३।३।१६२॥**

विधि-निमन्त्रणामन्त्रणाधीष्ट-सम्प्रश्न-प्रार्थनेषु धातोर्लोट् भवति।

उत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**२१४. एरुः ३।४।८६॥**

लोट इकारस्य स्थाने उकारादेशो भवति।

तातङादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२१५. तुह्योस्तातङ्ङाशिष्यन्यतरस्याम् ७।१।३५॥**

आशिषि 'तु-हि' एतयोः स्थाने वा तातङादेशो भवति। भवतु, भवतात्ः

अतिदेशसूत्रम्

**२१६. लोटो लङ्वत् ३।४।८५॥**

लोट्-लकारो लङ्-लकारवद् भवति।

तामाद्यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२१७. तस्थस्थमिपां तान्तन्तामः ३।४।१०१॥**

ङितश्चतुर्णां तस्थस्थमिपां स्थाने ताम्-तम्-त-अम् एते आदेशा भवन्ति। भवताम्। भवन्तु।

---

२१२- सामान्य भविष्यत् काल में धातु से लृट्-लकार होता है।

२१३- विधि, निमन्त्रण, आमन्त्रण, अधीष्ट, सम्प्रश्न, प्रार्थना इन अर्थों में और आशीर्वाद अर्थ में धातु से लिङ् और लोट् लकार होते हैं।

२१४- लोट् लकार के इकार के स्थान पर उकार आदेश होता है।

२१५- आशीर्वाद अर्थ में हुए प्रत्यय तु और हि के स्थान पर तातङ् आदेश विकल्प से होता है।

२१६- लोट्लकार लङ्लकार के समान होता है।

२१७- ङित्-लकारों के तस्, थस्, थ और मिप् के स्थान पर क्रमशः ताम्, तम्, त और अम् ये आदेश होते हैं।

हिविधायकं विधिसूत्रम्

**२१८. सेर्ह्यपिच्च ३।४।८७॥**

लोटः सेर्हिर्भवति सोऽपिच्च।

हेर्लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**२१९. अतो हेः ६।४।१०५॥**

अतः परस्य हेर्लुग् भवति। भव, भवतात्। भवतम्। भवत।

नि-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२२०. मेर्निः ३।४।८९॥**

लोटो मेर्निर्भवति।

आडागम-पिद्वद्भावविधायकं विधिसूत्रममतिदेशसूत्रञ्च

**२२१. आडुत्तमस्य पिच्च ३।४।९२॥**

लोडुत्तमस्याडागमो भवति स पिच्च। भवानि।

सकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२२२. नित्यं ङितः ३।४।९९॥**

ङितोऽन्त्यसकारस्य लोपो भवति। भवाव। भवाम।

लङ्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२२३. अनद्यतने लङ् ३।२।१११॥**

अनद्यतनभूते धातोर्लङ् भवति।

अडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२२४. लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः ६।४।७१॥**

लुङ्लङ्लृङ्क्षु परेषु धातोरडागमो भवति।

.................................................................................................

२१८- लोट् लकार के सि के स्थान पर हि आदेश होता है और वह अपित् भी हो जाता है।
२१९- ह्रस्व अकार से परे हि का लुक् होता है।
२२०- लोट् लकार के मि के स्थान पर नि आदेश होता है।
२२१- लोट् लकार के उत्तमपुरुष को आट् का आगम होता है और वह पित् हो जाता है।
२२२- ङित् लकार के उत्तमपुरुष के अन्त में विद्यमान सकार आदि का लोप हो।
२२३- अनद्यतन भूत काल में धातु से लङ् लकार होता है।
२२४- लुङ्, लङ्, लृङ् के परे रहने पर धातु को अट् का आगम होता है।

लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२२५. इतश्च ३।४।१००॥**

ङितो लस्य परस्मैपदस्यान्त्येतो लोपो भवति। अभवत्। अभवताम्। अभवन्। अभवः। अभवतम्। अभवत। अभवम्। अभवाव। अभवाम।

विधिलिङ्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२२६. विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसम्प्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् ३।३।१६१॥**

एष्वर्थेषु धातोर्लिङ् भवति।

यासुडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२२७. यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च ३।४।१०३॥**

लिङः परस्मैपदानां यासुडागमो भवति स ङिच्च।

इयादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२२८. अतो येयः ७।२।८०॥**

अतः परस्य सार्वधातुकावयवस्य यास् इत्यस्य स्थाने इय् आदेशो भवति।

लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२२९. लोपो व्योर्वलि ६।१।६६॥**

वकारयकारयोर्लोपो भवति वलि परे। भवेत्। भवेताम्।

जुसादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२३०. झेर्जुस् ३।४।१०८॥**

लिङो झेर्जुस् भवति।

भवेयुः। भवेः। भवेतम्। भवेत। भवेयम्। भवेव। भवेम।

---

२२५- ङित् लकारों के परस्मैपद में जो ह्रस्व इकारान्त, उस इकार का लोप होता है।
२२६- विधि, निमन्त्रण, आमन्त्रण, अधीष्ट, सम्प्रश्न, प्रार्थना अर्थों में धातु से लिङ् लकार होता है।
२२७- लिङ् लकार के परस्मैपदी प्रत्ययों को यासुट् का आगम होता है और वह ङित् भी होता है।
२२८- ह्रस्व अकार से परे सार्वधातुक के अवयव यास् के स्थान पर इय् आदेश होता है।
२२९- वल् प्रत्याहार के परे रहने पर वकार और यकार का लोप होता है।
२३०- लिङ् लकार के झि के स्थान पर जुस् आदेश होता है।

लिङ्लोट्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२३१. आशिषि लिङ्लोटौ ३।३।१७३॥**

आशिषि धातोर्लिङ्लोटौ भवतः।

आर्धधातुकसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२३२. लिङाशिषि ३।४।११६॥**

आशिषि लिङस्तिङ् आर्धधातुकसंज्ञको भवति।

कित्वविधायकमतिदेशसूत्रम्

**२३३. किदाशिषि ३।४।१०४॥**

आशिषि लिङो यासुट् किद्भवति।

गुणवृद्धिनिषेधकं विधिसूत्रम्

**२३४. क्ङिति च १।१।५॥**

गित्किन्ङिन्निमित्ते इग्लक्षणे गुणवृद्धी न भवतः।

संयोगादिसकारककारयोर्लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२३५. स्कोः संयोगाद्योरन्ते च ८।२।२९॥**

पदान्ते झलि परे च यः संयोगस्तदाद्योः सकारककारयोर्लोपो भवति।

भूयात्। भूयास्ताम्। भूयासुः। भूयाः। भूयास्तम्। भूयास्त। भूयासम्। भूयास्व। भूयास्म।

लुङ्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२३६. लुङ् ३।२।११०॥**

सामान्ये भूते धातोर्लुङ् भवति।

च्लिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**२३७. च्लि लुङि ३।१।४३॥**

लुङि परे धातोश्च्लिप्रत्ययो भवति।

..........................................................................................

२३१- आशीर्वाद अर्थ में धातु से लिङ् और लोट् लकार होते हैं।

२३२- आशीर्वाद अर्थ में लिङ् के स्थान पर जो तिङ् उसकी आर्धधातुकसंज्ञा होती है।

२३३- आशीर्वाद अर्थ में लिङ् लकार सम्बन्धी यासुट् को किद्वद्भाव होता है।

२३४- गित्, कित् और ङित् को मानकर इक् के स्थान पर होने वाले गुण और वृद्धि का निषेध होता है।

२३५- पदान्त में या झल् परे होने पर संयोग के आदि में स्थित सकार और ककार का लोप होता है।

२३६- सामान्य भूतकाल में धातु से लुङ् लकार होता है।

२३७- लुङ् के परे होने पर धातु से च्लि प्रत्यय होता है।

सिचादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२३८. च्लेः सिच् ३।१।४४॥**

'च्लि' इत्यस्य स्थाने सिचादेशो भवति।

सिचो लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**२३९. गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु २।४।७७॥**

इणादेशगाधातोः स्थाधातोः घुसंज्ञकधातो पिबतेर्भूधातोश्च परस्य सिचो लुग् भवति।

गुणनिषेधकं विधिसूत्रम्

**२४०. भूसुवोस्तिङि ७।३।८८॥**

सार्वधातुके तिङि परे भूसूधात्वोर्गुणो न भवति। अभूत्। अभूताम्। अभूवन्। अभूः। अभूतम्। अभूत। अभूवम्। अभूव। अभूम।

लृङ्लकारविधायकं विधिसूत्रम्

**२४१. लिङ्निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ ३।३।१३९॥**

हेतु-हेतुमद्भावादौ क्रियासिद्धेरनिष्पत्तौ सति भविष्यति अर्थे धातोर्लृङ्-लकारो भवति।

अभविष्यत्। अभविष्यताम्। अभविष्यन्। अभविष्यः। अभविष्यतम्। अभविष्यत। अभिष्यम्। अभविष्याव। अभविष्याम।

उपसर्गार्थं विधिसूत्रम्

**२४२. ते प्राग्धातोः १।४।८०॥**

ते गत्युपसर्गसंज्ञका धातोः पूर्वं प्रयोक्तव्या भवन्ति।

**उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते।**
**प्रहाराहार-संहार-विहार-परिहारवत्॥**

प्रभवति। सम्भवति। परिभवति। पराभवति। अनुभवति।

**अत सातत्यगमने।** अतति। अततः। अतन्ति।

---

२३८- च्लि के स्थान पर सिच् आदेश होता है।

२३९- इण्धातु के स्थान पर हुए गा-धातु, स्था-धातु, घु-संज्ञक-धातु, पाधातु और भू-धातु से परे सिच् का लुक् होता है।

२४०- सार्वधातुक तिङ् के परे होने पर भू और सू धातु को गुण नहीं होता है।

२४१- हेतु और हेतुमान् आदि भाव में क्रिया की सिद्धि होने के पूर्व भविष्यत् काल अर्थ गम्यमान होने पर धातु से लृङ् लकार होता है।

२४२- गतिसंज्ञकों और उपसर्गसंज्ञकों का प्रयोग धातु से पहले होता है। उपसर्गों से धातु का अर्थ बदल जाता है। जैसे प्रहार, आहार, संहार, विहार, परिहार आदि-आदि।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**२४३. अत आदेः ७।४।७०॥**

अभ्यासस्यादेरतो दीर्घो भवति। आत। आततुः। आतुः। आतिथ। आतथुः। आत। आत। आतिव। आतिम। अतिता। अतिष्यति। अततु।

आडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२४४. आडजादीनाम् ६।४।७२॥**

अजादेरङ्गस्याडागमो भवति लुङ्लङ्लृङ्क्षु।

आतत्। अतेत्। अत्यात्। अत्यास्ताम्।

ईडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२४५. अस्तिसिचोऽपृक्ते ७।३।९६॥**

विद्यमानात् सिचोऽस्धातोश्च परस्यापृक्तस्य हल ईडागमो भवति।

सलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२४६. इट ईटि ८।२।२८॥**

इटः परस्य सस्य लोपो भवति ईटि परे।

(वार्तिकम्) **सिच्लोप एकादेशे सिद्धो वाच्यः।** आतीत्। आतिष्टाम्।

जुसादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२४७. सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च ३।४।१०९॥**

सिचोऽभ्यस्ताद्विदेश्च परस्य ङित्सम्बन्धिनो झेर्जुस् भवति।

आतिषुः। आतीः। आतिष्टम्। आतिष्ट। आतिषम्। आतिष्व। आतिष्म। आतिष्यत्। षिध गत्याम्।

सकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२४८. धात्वादेः षः सः ६।१।६४॥**

धातोरादेः षकारस्य स्थाने सकारादेशो भवति।

---

२४३- अभ्यास के आदि में विद्यमान ह्रस्व अकार को दीर्घ होता है।

२४४- लुङ्, लङ्, लृङ् लकार के परे रहने पर अजादि अङ्ग को आट् का आगम होता है।

२४५- विद्यमान सिच् और अस् धातु से परे अपृक्त हल् को ईट् का आगम होता है।

२४६- इट् से परे सकार का लोप होता है, ईट् के परे होने पर।

वार्तिकार्थः- एकादेश करना हो तो सिच् का लोप सिद्ध माना जाता है।

२४७- सिच् और अभ्यस्तसंज्ञक से परे ङित्-लकार सम्बन्धी झि के स्थान पर जुस् आदेश होता है।

२४८- धातु के आदि में विद्यमान षकार के स्थान पर सकार आदेश होता है।

लघुसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२४९. ह्रस्वं लघु १।४।१०॥**

ह्रस्वस्य लघुसंज्ञा भवति।

गुरुसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**२५०. संयोगे गुरु १।४।११॥**

संयोगे परे ह्रस्वस्यापि गुरुसंज्ञा भवति।

गुरुसंज्ञाविधायकं द्वितीयं संज्ञासूत्रम्

**२५१. दीर्घं च १।४।१२॥**

दीर्घस्य गुरुसंज्ञा भवति।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

**२५२. पुगन्तलघूपधस्य च ७।३।८६॥**

पुगन्तस्य लघूपधस्य चाङ्गस्येको गुणो भवति सार्वधातुकार्धधातुकयोः। सेधति। सिषेध।

किद्वद्विधायकमतिदेशसूत्रम्

**२५३. असंयोगाल्लिट् कित् १।२।५॥**

असंयोगात्परोऽपिल्लिट् किद्भवति। सिषिधतुः। सिषिधुः। सिषेधिथ। सिषिधथुः। सिषिध। सिषेध। सिषिधिव। सिषिधिम। सेधिता। सेधिष्यति। सेधतु। असेधत्। सेधेत्। सिध्यात्। असेधीत्। असेधिष्यत्।

एवं चिति संज्ञाने। शुच शोके। गद व्यक्तायां वाचि। गदति।

चवर्गादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२५४. कुहोश्चुः ७।४।६२॥**

अभ्यासकवर्गहकारयोः स्थाने चवर्गादेशो भवति।

---

२४९- ह्रस्व की लघुसंज्ञा होती है।

२५०- संयोग के परे होने पर ह्रस्व की भी गुरुसंज्ञा होती है।

२५१- दीर्घ की गुरुसंज्ञा होती है।

२५२- पुगन्त अङ्ग और लघूपध अङ्ग को गुण होता है सार्वधातुक और आर्धधातुक के परे होने पर।

२५३- असंयोग से परे पित् से भिन्न लिट् को किद्वद्भाव होता है।

२५४- अभ्यास के कवर्ग और हकार के स्थान पर चवर्ग आदेश होता है।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**२५५. अत उपधायाः ७।२।११६॥**

उपधाया अतो वृद्धिर्भवति ञिति णिति च प्रत्यये परे।

जगाद। जगदतुः। जगदुः। जगदिथ। जगदथुः। जगद।

णित्वातिदेशविधायकम् अतिदेशसूत्रम्

**२५६. णलुत्तमो वा ७।१।९१॥**

उत्तमो णल् णिद्वा भवति। जगाद, जगद। जगदिव। जगदिम। गदिता। गदिष्यति। गदतु। अगदत्। गदेत्। गद्यात्।

वैकल्पिकवृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**२५७. अतो हलादेर्लघोः ७।२।७॥**

हलादेर्लघोरकारस्य इडादौ परस्मैपदे सिचि वृद्धिर्वा भवति।

अगादीत्, अगदीत्। णद अव्यक्ते शब्दे।

नकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२५८. णो नः ६।१।६५॥**

धात्वादेर्णस्य नकारादेशो भवति। नदति। ननाद।

एत्वाभ्यासलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२५९. अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि ६।४।१२०॥**

लिटमाश्रित्यादेशादिकं न भवति यदङ्गं, तस्यावयवस्यासंयुक्तहल्मध्यस्थाकारस्य एकारादेशोऽभ्यासलोपश्च भवतः किति लिटि। नेदतुः। नेदुः।

.........................................................................................................

२५५- ञित् और णित् प्रत्यय के परे होने पर उपधा के ह्रस्व अकार की वृद्धि होती है।

२५६- उत्तम पुरुष के णल् को णित्व विकल्प से होता है।

२५७- हलादि धातु के लघुसंज्ञक अकार की वृद्धि विकल्प से होती है इडादि सिच् के परे रहने पर।

२५८- धातु के आदि में विद्यमान णकार के स्थान पर नकार आदेश होता है।

२५९- लिट् को निमित्त मानकर कोई आदेश आदि न हुआ हो ऐसे धातु रूप अङ्ग के असंयुक्त हल् के मध्य में स्थित ह्रस्व अकार के स्थान पर एकार आदेश और अभ्यास का लोप होता है।

एत्वाभ्यासलोपविधायकं द्वितीयं सूत्रम्

## २६०. थलि च सेटि ६।४।१२१॥

लिटमाश्रित्यादेशादिकं न भवति यदङ्गं तस्यावयवस्यासंयुक्तहल्मध्यस्थाकारस्य एकारादेशोऽभ्यासलोपश्च भवति सेटि थलि।

नेदिथ। नदिता। नदिष्यति। नदतु। अनदत्। नदेत्। नद्यात्। अनादीत्, अनदीत्। अनदिष्यत्। टुनदि समृद्धौ।

इत्संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## २६१. आदिर्ञिटुडवः १।३।५।

उपदेशे धातोराद्या ञिटुडव इत्संज्ञका भवन्ति।

नुमागमविधायकं विधिसूत्रम्

## २६२. इदितो नुम् धातोः ७।१।५८॥

इदितो धातोर्नुमागमो भवति।नन्दति। ननन्द। नन्दिता। नन्दिष्यति। नन्दतु। अनन्दत्। नन्देत्। नन्द्यात्। अनन्दीत्। अनन्दिष्यत्। व्रज गतौ। व्रजति। वव्राज। व्रजिता। व्रजिष्यति। व्रजतु। अव्रजत्। व्रजेत्। व्रज्यात्।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

## २६३. वदव्रजहलन्तस्याचः ७।२।३॥

वद-व्रज-हलन्तधातूनामङ्गस्याचो वृद्धिर्भवति सिचि परस्मैपदेषु।

अव्राजीत्। अव्रजिष्यत्।

---

२६०- लिट् को निमित्त मानकर कोई आदेश आदि न हुआ हो ऐसे धातु रूप अङ्ग के असंयुक्त हल् के मध्य में स्थित ह्रस्व अकार के स्थान पर एकार आदेश और अभ्यास का लोप होता है इट् से युक्त थल् के परे होने पर।

२६१- उपदेश अवस्था में धातु के आदि में स्थित ञि, टु, डु की इत्संज्ञा होती हैं।

२६२- इदित् धातु को नुम् का आगम होता है।

२६३- वद, व्रज और हलन्त धातुओं के अङ्ग के अच् की वृद्धि होती है सिच् आदि में हो ऐसे परस्मैपद के परे रहने पर।

पिबाद्यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२६४. पाघ्राध्मास्थाम्नादाण्दृश्यर्तिसर्तिशदसदां पिबजिघ्रधमतिष्ठमनयच्छपश्यर्च्छधौशीयसीदाः ७।३।७८॥**

पा-घ्रा-ध्मा-स्था-म्ना-दाण्-दृश्-ऋ-सृ-शद्-सद् इत्येतेषां धातूनां स्थाने क्रमशः पिब-जिघ्र-धम-तिष्ठ-मन-यच्छ-पश्य-ऋच्छ-धौ-शीय-सीद एते आदेशा भवन्ति, इत्संज्ञकशकारादौ प्रत्यये परे। पा पाने। पिबति।

औकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२६५. आत औ णलः ७।१।३४॥**

आदन्ताद्धातोर्णलः स्थाने औकारादेशो भवति। पपौ।

आकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२६६. आतो लोप इटि च ६।४।६४॥**

अजाद्योरार्धधातुकयोः क्ङिदिटोः परयोरातो लोपो भवति। पपतुः। पपुः।

इण्-निषेधकं विधिसूत्रम्

**२६७. एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् ७।२।१०॥**

उपदेशे यो धातुरेकाज् अनुदात्तश्च तत आर्धधातुकस्येड् न भवति।

नियमसूत्रम्

**२६८. ऋतो भारद्वाजस्य ७।२।६३॥**

तासौ परे नित्यानिटाम् ऋदन्तानामेव थलो नेट् भारद्वाजस्य मतेन, अन्येषां धातूनां तु भवत्येव। पपिथ-पपाथ। पपथुः। पप। पपौ। पपिव। पपिम। पाता। पास्यति। पिबतु। अपिबत्। पिबेत्।

---

२६४- शकार की इत्संज्ञा हुई हो ऐसे प्रत्यय के परे होने पर पा, घ्रा, ध्मा, स्था, म्ना, दाण्, दृश्, ऋ, सृ, शद् और सद् इन धातुओं के स्थान पर क्रमशः पिब, जिघ्र, धम, तिष्ठ, मन, यच्छ, पश्य, ऋच्छ, धौ, शीय और सीद ये आदेश होते हैं।

२६५- आकारान्त धातु से परे णल् के स्थान पर औकार आदेश होता है।

२६६- कित्, ङित्, इट् परक अजादि आर्धधातुक के परे होने पर आकार का लोप होता है।

२६७- उपदेश अवस्था में जो धातु एकाच् अथवा अनुदात्त हो, उससे परे आर्धधातुक को इट् का निषेध होता है।

२६८- भारद्वाज ऋषि के मत में तास् के परे रहने पर नित्य अनिट् होने वाले ऋदन्त धातु से परे ही थल् को इट् न हो, अन्य धातुओं के थल् को इट् हो जाय।

एत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**२६९. एर्लिङि ६।४।६७॥**

घु-मा-स्था-गा-पा-जहाति-साम् एत्वं भवति, आर्धधातुके किति लिङि। पेयात्। पेयास्ताम्, पेयासुः।

जुसादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२७०. आतः ३।४।११०॥**

सिज्लुकि आदन्तादेव झेर्जुस् भवति।

पररूपविधायकं विधिसूत्रम्

**२७१. उस्यपदान्तात् ६।१।९६**

अपदान्तादकारादुसि परे पररूपमेकादेशो भवति।

अपुः। अपास्यत्। गम्लृ गतौ।

छत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**२७२. इषुगमियमां छः ७।३।७७॥**

एषां धातूनां छकारान्तादेशो भवति शिति परे। गच्छति। जगाम।

उपधालोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२७३. गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि ६।४।९८॥**

एषां धातूनामुपधाया लोपो भवति अजादौ किति ङिति च न त्वङि। जग्मतुः। जग्मुः। जगमिथ-जगन्थ। जग्मथुः। जग्म। जगाम-जगम। जग्मिव। जग्मिम।

इडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२७४. गमेरिट् परस्मैपदेषु ७।२।५८॥**

गमेः परस्य सादेरार्धधातुकस्येड् भवति परस्मैपदेषु।

गमिष्यति। गच्छतु। अगच्छत्। गच्छेत्। गम्यात्।

---

२६९- घुसंज्ञक धातु और मा, स्था, गा, पा, हा और षो धातु को एत्व होता है, आर्धधातुक कित् लिङ् के परे रहने पर।

२७०- सिच् का लुक् होने पर आदन्त धातु से परे झि के स्थान पर जुस् आदेश होता है।

२७१- अपदान्त अकार से उस् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर पररूप एकादेश होता है।

२७२- इष्, गम् और यम् धातु को छकार अन्तादेश होता है शकार-इत्संक प्रत्यय के परे होने पर।

२७३- गम्, हन्, जन्, खन् और घस् धातु के उपधा का लोप होता है अजादि कित् ङित् के परे होने पर किन्तु अङ् के परे होने पर नहीं।

२७४- गम् धातु से परे सकारादि आर्धधातुक को इट् का आगम होता है, परस्मैपद में।

अङादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२७५. पुषादिद्युताद्य्लृदितः परस्मैपदेषु ३।१।५५॥**

पुषादि-द्युतादि-लृदितो ये धातवस्तेभ्यः परेभ्यः च्लेरङादेशो भवति परस्मैपदेषु। अगमत्। अगमिष्यत्।

इति परस्मैपदिनः।

## अथ आत्मनेपदिनः

**एध वृद्धौ।**

एत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**२७६. टित आत्मनेपदानां टेरे ३।४।७९॥**

टितो लस्यात्मनेपदानां टेरेत्वं भवति। एधते।

ङित्त्वविधायकमतिदेशसूत्रम्

**२७७. सार्वधातुकमपित् १।२।४॥**

अपित् सार्वधातुकं ङिद्वद्भवति।

इयादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२७८. आतो ङितः ७।२।८१॥**

अतः परस्य ङितामाकारस्य स्थाने इय् भवति। एधेते। एधन्ते।

से-इत्यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२७९. थासः से ३।४।८०॥**

टितो लस्य थासः स्थाने से भवति।

एधसे। एधेथे। एधध्वे। एधे। एधावहे। एधामहे।

आम्-विधायकं विधिसूत्रम्

**२८०. इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः ३।१।३६॥**

इजादिर्यो धातुर्ऋच्छतिभिन्नो गुरुमान्, ततः आम् भवति लिटि।

..............................................................................................

२७५- पुपादि, द्युतादि तथा लृ इत्संज्ञक हों, ऐसे धातुओं से पर च्लि के स्थान पर अङ् आदेश होता है, परस्मैपद में।

२७६- टित् लकार के आत्मनेपदीय प्रत्ययों के टि के स्थान पर एकार आदेश होता है।

२७७- अपित् सार्वधातुक ङित् के समान होता है।

२७८- ह्रस्व अकार से परे ङित् लकार-सम्बन्धी आकार के स्थान पर इय् आदेश होता है।

२७९- टित् लकार-सम्बन्धी थास् के स्थान पर से आदेश होता है।

२८०- ऋच्छ में भिन्न जो धातु इजादि या गुरु-वर्ण से युक्त हो, उससे परे आम् प्रत्यय होता है लिट् के परे होने पर।

लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

## २८१. आमः २।४।८१॥

आमः परस्य प्रत्ययस्य लुग् भवति।

कृभ्वसाम् अनुप्रयोगविधायकं विधिसूत्रम्

## २८२. कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि ३।१।४०॥

आमन्ताद्धातोर्लिट्पराणां कृ-भू-अस् एतेषां धातूनामनुप्रयोगो भवति।

आत्मनेपदविधायकं विधिसूत्रम्

## २८३. आम्प्रत्ययवत्कृञोऽनुप्रयोगस्य १।३।६३॥

आम्प्रकृतिकधातोरनुप्रयुक्तात् कृधातोरप्यात्मनेपदं भवति।

अदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## २८४. उरत् ७।४।६६॥

प्रत्यये परेऽभ्यास-ऋवर्णस्य स्थानेऽत् इत्यादेशो भवति।

एशिरेजादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## २८५. लिटस्तझयोरेशिरेच् ३।४।८१॥

लिटस्तझयोरेश्-इरेच् एतावादेशौ भवतः।

एधाञ्चक्रे। एधाञ्चक्राते। एधाञ्चक्रिरे। एधाञ्चकृषे। एधाञ्चक्राथे।

ढत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## २८६. इणः षीध्वंलुङ्लिटां धोऽङ्गात् ८।३।७८॥

इणन्तादङ्गात्परेषां षीध्वंलुङ्लिटां धस्य स्थाने ढकारादेशो भवति।

एधाञ्चकृढ्वे। एधाञ्चक्रे। एधाञ्चकृवहे। एधाञ्चकृमहे। एधाम्बभूव। एधामास। एधामासतुः। एधामासुः। एधामासिथ। एधामासथुः। एधामास। एधामास। एधामासिव। एधामासिम। एधिता। एधितारौ। एधितारः।

---

२८१- आम् से परे प्रत्यय का लुक् होता है।

२८२- आमन्त धातु से परे लिट् लकार सहित कृ, भू और अस् इन धातुओं का अनुप्रयोग होता है।

२८३- आम्प्रकृतिक धातु से अनुप्रयुक्त कृ-धातु से भी आत्मनेपद ही होता है।

२८४- प्रत्यय परे होने पर अभ्यास ऋवर्ण के स्थान पर अत् आदेश होता है।

२८५- लिट् लकार के त और झ के स्थान पर क्रमशः एश् और इरेच् आदेश होते हैं।

२८६- इणन्त अङ्ग से परे षीध्वम्, लुङ् और लिट् के धकार के स्थान पर ढकार आदेश होता है।

सकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२८७. धि च ८।२।२५॥**

धादौ प्रत्यये परे सस्य लोपो भवति। एधिताध्वे।

हकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२८८. ह एति ७।४।५२॥**

तासस्त्योः सस्य स्थाने हकारादेशो भवति एति परे।

एधिताहे। एधितास्वहे। एधितास्महे। एधिष्यते। एधिष्येते। एधिष्यन्ते।

एधिष्यसे। एधिष्येथे। एधिष्यध्वे। एधिष्ये। एधिष्यावहे। एधिष्यामहे।

आमादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२८९. आमेतः ३।४।९०॥**

लोट एकारस्य स्थाने आमादेशो भवति। एधताम्, एधेताम्, एधन्ताम्।

वामादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२९०. सवाभ्यां वामौ ३।४।९१॥**

सवाभ्यां परस्य लोडेतः क्रमाद् व-अम् एतावादेशौ भवतः।

एधस्व। एधेथाम्। एधध्वम्।

ऐकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२९१. एत ऐ ३।४।९३॥**

लोडुत्तमस्य एतः स्थाने ऐकारादेशो भवति। एधै। एधावहै। एधामहै।

ऐधत। ऐधेताम्, ऐधन्त। ऐधथाः। ऐधेथाम्। ऐधध्वम्। ऐधे। ऐधावहि। ऐधामहि।

सीयुडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२९२. लिङः सीयुट् ३।४।१०२॥**

लिङः सीयुडागमो भवति।

---

२८७- धकारादि प्रत्यय के परे होने पर सकार का लोप होता है।

२८८- तास् और अस् के सकार के स्थान पर हकार आदेश होता है एकार के परे होने पर।

२८९- लोट् लकार के एकार के स्थान पर आम् आदेश होता है।

२९०- स और व से परे लोट् लकार के एकार के स्थान पर क्रम से व और अम् आदेश होते हैं।

२९१- लोट् लकार उत्तमपुरुष के एकार के स्थान पर ऐकार आदेश होता है।

२९२- लिङ् लकार को सीयुट् आगम होता है।

सकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**२९३. लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य ७।२।७९॥**

सार्वधातुकलिङोऽनन्त्यस्य सस्य लोपो भवति। एधेत एधेयाताम्।

रनादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२९४. झस्य रन् ३।४।१०५॥**

लिङो झस्य स्थाने रनादेशो भवति।

एधेरन्। एधेथाः। एधेयाथाम्। एधेध्वम्।

अदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२९५. इटोऽत् ३।४।१०६॥**

लिङादेशस्येटः स्थानेऽदादेशो भवति। एधेय। एधेवहि। एधेमहि।

सुडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**२९६. सुट् तिथोः ३।४।१०७॥**

लिङस्तथोः सुडागमो भवति।

एधिषीष्ट। एधिषीयास्ताम्। एधिषीरन्। एधिषीष्ठाः। एधिषीयास्थाम्। एधिषीध्वम्। एधिषीय। एधिषीवहि। एधिषीमहि। ऐधिष्ट। ऐधिषाताम्।

अत्-इत्यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**२९७. आत्मनेपदेष्वनतः ७।१।५॥**

अनकारात्परस्यात्मनेपदस्य झस्य अत् इत्यादेशो भवति।

ऐधिषत। ऐधिष्ठाः। ऐधिषाथाम्। ऐधिढ्वम्। ऐधिषि। ऐधिष्वहि। ऐधिष्महि। ऐधिष्यत। ऐधिष्येताम्। ऐधिष्यन्त। ऐधिष्यथाः। ऐधिष्येथाम्। ऐधिष्यध्वम्। ऐधिष्ये। ऐधिष्यावहि। ऐधिष्यामहि।

**इत्यात्मनेपदिनः।**

---

२९३- सार्वधातुक लिङ् के अनन्त्य सकार का लोप होता है।

२९४- लिङ् लकार के झ के स्थान पर रन् आदेश होता है।

२९५- लिङ् लकार के इट् के स्थान पर अत् आदेश होता है।

२९६- लिङ् लकार के त और थ को सुट् का आगम होता है।

२९७- ह्रस्व अकार से परें न हो ऐसे आत्मनेपदीय झकार के स्थान पर अत् ऐंसा आदेश होता है।

## अथोभयपदिनः

श्रिञ् सेवायाम्।

अत्र ञकारस्येत्संज्ञाकारणात् कर्तृगामिनि क्रियाफले सति आत्मनेपदम्, अन्यथा परस्मैपदम्। अतः एतादृशा धातव उभयपदिनो भवन्ति।

श्रयति, श्रयते।

इयङुवङादेशविधायकं विधिसूत्रम्

### २९८. अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ ६।४।७७॥

अजादौ प्रत्यये परे श्नुप्रत्ययान्तस्य, इवर्णोवर्णान्तस्य धातोः, भ्रू-इत्यस्य च अङ्गस्य इयङुवङावादेशौ भवतः।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

### २९९. अचो ञ्णिति ७।२।११५॥

अजन्ताङ्गस्य वृद्धिर्भवति ञिति णिति च प्रत्यये परे।

शिश्राय, शिश्रिये। श्रयितासि, श्रयितासे। श्रयिप्यति, श्रयिष्यते।

श्रयतु-श्रयतात्, श्रयताम्। अश्रयत्, अश्रयत। श्रयेत्, श्रयेत।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

### ३००. अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः ७।४।२५॥

अजन्ताङ्गस्य दीर्घो भवति यादौ प्रत्यये परे, न तु कृत्सार्वधातुकयोः परयोः।

श्रीयात्, श्रयिषीष्ट।

चङादेशविधायकं विधिसूत्रम्

### ३०१. णिश्रिद्रुस्रुभ्यः कर्तरि चङ् ३।१।४८॥

ण्यन्तात् श्रिद्रुस्रुभ्यश्च परस्य च्लेश्चङ् भवति, कर्त्रर्थे लुङि परे।

..............................................................................................................

२९८- अजादि प्रत्यय के परे होने पर श्नुप्रत्ययान्तरूप, इवर्ण और उवर्णान्त धातु और भ्रू इस अङ्ग को इयङ् और उवङ् आदेश होता है।

२९९- ञित् और णित् प्रत्यय के परे रहने पर अजन्त अङ्ग को वृद्धि होती है।

३००- अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है यकारादि प्रत्यय के परे होने पर किन्तु कृत् और सार्वधातुक के परे होने पर नहीं।

३०१- णि अन्त में हो ऐसे धातु से, श्रि-द्रु-स्रु धातु से परे च्लि के स्थान पर चङ् आदेश होता है, कर्ता अर्थ में हुए लुङ् लकार के परे होने पर।

द्वित्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३०२. चङि ६।१।११॥**

चङि परेऽनभ्यासस्य धात्ववयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वित्वं भवति, अजादेस्तु द्वितीयैकाचो द्वित्वं भवति।

अशिश्रियत्, अशिश्रियत। अश्रयिष्यत्, अश्रयिष्यत।

इति भ्वादिप्रकरणम्।

---

३०२- चङ् के परे होने पर अभ्याससंज्ञ-भिन्न धातु कं अवयव प्रथम एकाच एवं अजादि धातु के द्वितीय एकाच को द्वित्व होता है।

इति भ्वादिप्रकरणम्।

# अथ-अदादिप्रकरणम्

**अद भक्षणे।**

शपो लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**३०३. अदिप्रभृतिभ्यः शपः २।४।७२॥**

अदादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः शपो लुग् भवति।

अत्ति। अत्तः। अदन्ति। अत्सि। अत्थः। अत्थ। अद्मि। अद्वः। अद्मः।

घस्लृ-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३०४. लिट्यन्यतरस्याम् २।४।४०॥**

अदः स्थाने वा घस्लृ-आदेशो भवति लिटि। जघास।

षत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३०५. शासिवसिघसीनां च ८।३।६०॥**

इण्कवर्गाभ्यां परस्य शास्-वस्-घस्धातूनां सस्य षकारादेशो भवति।

जक्षतुः। जक्षुः। जघसिथ। जक्षथुः। जक्ष। जघास, जघस। जक्षिव। जक्षिम। आद। आदतुः। आदुः। अत्ता। अत्स्यति। अत्तु।

हेर्धिर्विधायकं विधिसूत्रम्

**३०६. हुझल्भ्यो हेर्धिः ६।४।१०१॥**

होर्झलन्तेभ्यश्च हेर्धिर्भवति।

अद्धि-अत्तात्। अत्तम्। अत्त। अदानि। अदाव। अदाम।

अडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**३०७. अदः सर्वेषाम् ७।३।१००॥**

अदः परस्यापृक्तसार्वधातुकस्याड् भवति सर्वेषां मते।

आदत्। आत्ताम्, आदन्। आदः। आत्तम्। आत्त। आदम्। आद्व। आद्म। अद्यात्। अद्याताम्, अद्युः। अद्यात्। अद्यास्ताम्। अद्यासुः।

............................................................................................................................

३०३- अदादिगण में पढ़े गये धातुओं से परे शप् का लुक् होता है।

३०४- अद् धातु के स्थान पर विकल्प से घस्लृ आदेश होता है लिट् के परे होने पर।

३०५- इण् और कवर्ग से परे शास्, वस् और घस् धातु के सकार के स्थान पर षकार आदेश होता है।

३०६- हु और झलन्त धातु से परे हि के स्थान पर धि आदेश होता है।

३०७- अद् धातु से परे अपृक्त सार्वधातुक को अट् का आगम होता है, सब के मत में।

घस्लृ-आदेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३०८. लुङ्सनोर्घस्लृ २।४।३७॥**

अदो घस्लृ भवति लुङि सनि च। लृदित्वादङ्।

अघसत्। आत्स्यत्।

**या प्रापणे।** याति। यातः। यान्ति। ययौ। ययतुः।

याता। यास्यति। यातु। अयात्। अयाताम्। अयुः। यायात्। यायाताम्,

यायुः। यायात्। यायास्ताम्। यायासुः।

सक्सन्नियोग-इडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**३०९. यमरमनमातां सक् च ७।२।७३॥**

यम-रम-नमातां धातूनां सगागमः सिच इट् च भवति परस्मैपदेषु।

अयासीत्। अयासिष्टाम्। अयासिषुः। अयास्यत्।

**वा गतिगन्धनयोः। भा दीप्तौ। रा दाने। ला आदाने। पा रक्षणे।**

**अस् भुवि।** अस्ति।

अल्लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३१०. श्नसोरल्लोपः ६।४।१११॥**

श्नस्यास्तेश्चातो लोपो भवति सार्वधातुके किति ङिति च परे।

स्तः। सन्ति। असि। स्थः। स्थ। अस्मि। स्वः। स्मः।

'भू' इत्यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३११. अस्तेर्भू २।४।५२॥**

अस्-धातोः स्थाने 'भू' इत्यादेशो भवति, आर्धधातुके।

बभूव। भविता। भविष्यति। अस्तु-स्तात्। स्ताम्, सन्तु।

---

३०८- अद् धातु के स्थान पर घस्लृ आदेश होता है लुङ् और सन् के परे।

३०९- यम्, रम्, नम् और आकारान्त धातु को सक् आगम और सिच् को इट् का आगम भी होता है परस्मैपद में।

३१०- श्न और अस्-धातु के अकार का लोप होता है, कित् या ङित् सार्वधातुक के परे होने पर।

३११- अस्-धातु के स्थान पर भू आदेश होता है आर्धधातुक परे होने पर।

एत्त्वाभ्यासलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३१२. घ्वसोरेद्धावभ्यासलोपश्च ६।४।११९॥**

घोरस्तेश्चैत्वं भवति हौ परेऽभ्यासलोपश्च।

एधि-स्तात्। स्तम्। स्त। असानि। असाव। असाम। आसीत् आस्ताम्। आसन्। स्यात्। स्याताम्। स्युः। भूयात्। अभूत्। अभविष्यत्।

इत्यदादिप्रकरणम्।

---

**३१२-** घुसंज्ञक और अस् धातु के स्थान पर एकार आदेश होता है हि के परे रहने पर, यदि अभ्यास हो तो उसका लोप भी।

**इत्यदादिप्रकरणम्।**

# अथ जुहोत्यादिप्रकरणम्

हु दानादानयोः।

शपः श्लुविधायकं विधिसूत्रम्

**३१३. जुहोत्यादिभ्यः श्लुः २।४।७५॥**

जुहोत्यादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः शपः श्लुर्भवति।

द्वित्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३१४. श्लौ ६।१।१०॥**

श्लौ परे धातोर्द्वित्वं भवति। जुहोति। जुहुतः।

अभ्यस्तसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**३१५. उभे अभ्यस्तम् ६।१।५॥**

षाष्ठद्वित्वप्रकरणे उभयोरभ्यस्तसंज्ञा भवति।

अदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३१६. अदभ्यस्तात् ७।१।४॥**

अभ्यस्तात्परस्य प्रत्ययावयवस्य झस्य स्थानेऽदादेशो भवति।

यणादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३१७. हुश्नुवोः सार्वधातुके ६।४।८७॥**

हुधातोः श्नुप्रत्ययान्तस्यानेकाचोऽङ्गस्य चासंयोगपूर्वोवर्णस्य स्थाने यण् भवति सार्वधातुकेऽजादौ।

जुह्वति। जुहोषि। जुहुथः। जुहुथ। जुहोमि। जुहुवः। जुहुमः।

---

३१३- जुहोत्यादिगण में पठित धातुओं से परे शप् को श्लु होता है।

३१४- श्लु के परे होने पर धातु को द्वित्व होता है।

३१५- छठवें अध्याय के द्वित्व प्रकरण में दोनों की अभ्यस्तसंज्ञा होती है।

३१६- अभ्यस्तसंज्ञक से परे प्रत्यय-झकार के स्थान पर अत् आदेश होता है।

३१७- हुधातु तथा श्नुप्रत्ययान्त अनेकाच् जो अङ्ग, उनके असंयोगपूर्व उकार के स्थान पर यण् होता है, अजादि सार्वधातुक के परे होने पर।

आमादिविधायकं विधिसूत्रमतिदेशसूत्रञ्च

**३१८. भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च ३।१।३९॥**

एभ्यो लिटि आम् वा भवति, आमि श्लाविव कार्यञ्च।

जुहवाञ्चकार, जुहाव। होता। होष्यति। जुहोतु। अजुहोत्। अजुहुताम्।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

**३१९. जुसि च ७।३।८३॥**

इगन्ताङ्गस्य गुणो भवति, अजादौ जुसि परे।

अजुहवुः। जुहुयात्। हूयात्। अहौषीत्।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**३२०. सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु ७।२।१॥**

इगन्तङ्गस्य वृद्धिर्भवति परस्मैपदे सिचि।

अहौषीत्। अहौष्टाम्। अहौषुः। अहोष्यत्।

इति जुहोत्यादिप्रकरणम्।

---

३१८- भी, ह्री, भृ और हु धातुओं से विकल्प से आम् होता है और आम के परे होने पर श्लु के समान कार्य भी होते हैं।

३१९- इगन्त अङ्ग को गुण होता है, अजादि जुस् के परे होने पर।

३२०- इगन्त अङ्ग को वृद्धि होती है, परस्मैपद सिच् के परे होने पर।

इति जुहोत्यादिप्रकरणम्।

# अथ दिवादिप्रकरणम्

दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु।

श्यन्-विधायकं विधिसूत्रम्

## ३२१. दिवादिभ्यः श्यन् ३।१।६९।।

दिवादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः श्यन् भवति शपं प्रबाध्य।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

## ३२२. हलि च ८।२।७७।।

रेफ-वान्तस्य धातोरुपधाया इको दीर्घो भवति हलि।

दीव्यति। दिदेव। देविता। देविष्यति। दीव्यतु। अदीव्यत्। दीव्येत्। दीव्यात्। अदेवीत्। अदेविष्यत्। षिवु तन्तुसन्ताने। सीव्यति। सिसेव। सेविता। सेविष्यति। सीव्यतु। असीव्यत्, सीव्येत्। सीव्यात्। असेवीत्। असेविष्यत्। नृती गात्रविक्षेपे। नृत्यति। ननर्त। नर्तिता।

इडागमविधायकं विधिसूत्रम्

## ३२३. सेऽसिचि कृतचृतच्छृदतृदनृतः ७।२।५७।।

एभ्यो धातुभ्यः परस्य सिज्भिन्नस्य सादेरार्धधातुकस्येड् वा भवति।

नर्तिष्यति, नर्त्स्यति। नृत्यतु। अनृत्यत्। नृत्येत्। नृत्यात्। अनर्तीत्। अनर्तिष्यत्, अनर्त्स्यत्। शो तनूकरणे।

ओतो लोपविधायकं विधिसूत्रम्

## ३२४. ओतः श्यनि ७।३।७१।।

श्यनि परे ओतो लोपो भवति। श्यति। श्यतः। श्यन्ति।

आत्वविधायकं विधिसूत्रम्

## ३२५. आदेच उपदेशेऽशिति ६।१।४५।।

उपदेशे एजन्तस्य धातोरात्त्वं भवति, न तु शिति।

शशौ। शशतुः। शशुः। शाता। शास्यति। श्यतु। अश्यत्। श्येत्। शायात्।

.....................................................................................................

३२१- दिवादि-गण में पठित धातुओं से श्यन् होता है शप् को बाधकर।

३२२- हल् के परे होने पर रेफ और वकारान्त धातु के उपधासंज्ञक इक् को दीर्घ होता है।

३२३- कृत्, चृत्, छृद्, तृद् और नृत् धातु से परे सिच् से भिन्न सकारादि आर्धधातुक को इट् आगम विकल्प से होता है।

३२४- श्यन् के परे होने पर ओकारान्त धातु के ओकार का लोप होता है।

सिचो लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**३२६. विभाषा घ्राधेट्शाच्छासः २।४।७८॥**

एभ्यः परस्य सिचो लुग् वा भवति परस्मैपदे परे। अशात्। अशाताम्, अशुः। इट्सकौ- अशासीत्। अशासिष्टाम्। अशास्यत्।

ककारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३२७. षढोः कः सि ८।२।४१॥**

षकारढकारयोः स्थाने ककारादेशो भवति सि परे। **क्ष्संयोगे क्षः।** पोक्ष्यति। पुष्यतु। अपुष्यत्। पुष्येत्। पुष्यात्। पुषादित्वादङ्-अपुषत्। अपोक्ष्यत्। **शुष शोषणे। जनी प्रादुर्भावे।**

जादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३२८. ज्ञाजनोर्जा ७।३।७९॥**

अनयोः स्थाने जादेशो भवति शिति परे।

जायते। जज्ञे। जनिता। जनिष्यते। जायताम्। अजायत। जायेत। जनिषीष्ट।

चिणादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३२९. दीपजनबुधपूरितायिप्यायिभ्योऽन्यतरस्याम् ३।१।६१॥**

एभ्यः परस्य च्लेः स्थाने चिणादेशो भवति, एकवचने तशब्दे परे।

लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**३३०. चिणो लुक् ६।४।१०४॥**

चिणः परस्य तशब्दस्य लुग् भवति। अजनि-अजनिष्ट।

इति दिवादिप्रकरणम्।

---

**३२५-** उपदेश अवस्था में एजन्त धातु के एच् के स्थान पर आकार आदेश होता है किन्तु शित् परे होने पर नहीं।

**३२६-** घ्रा, धेट्, शो, छो और षो धातु से परे सिच् का विकल्प से लुक् होता है, परस्मैपद में।

**३२७-** षकार और ढकार के स्थान पर ककार आदेश होता है सकार के परे होने पर।

**३२८-** ज्ञा और जन् धातु के स्थान पर जा आदेश होता है शित् के परे होने पर।

**३२९-** एकवचन त-शब्द के परे होने पर दीप, जन, बुध, पूरि, ताय् और प्याय् धातुओं से परे च्लि के स्थान पर चिण् आदेश होता है।

**३३०-** चिण् से परे त का लुक् हो।



**इति दिवादिप्रकरणम्।**

# अथ स्वादिप्रकरणम्

षुञ् अभिषवे।

शनु-विधायकं विधिसूत्रम्

**३३१. स्वादिभ्यः श्नुः ३।१।७३॥**

कर्तरि सार्वधातुके स्वादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः श्नुर्भवति शपं प्रबाध्य। सुनोति। सुनुतः।

हेर्लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**३३२. उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् ६।४।१०६॥**

असंयोगपूर्वात् प्रत्ययोतो परस्य हेर्लुग् भवति। सुनु।

असुनोत्, असुनुत। सुनुयात्, सुन्वीत। सूयात्, सोषीष्ट।

इड्-विधायकं विधिसूत्रम्

**३३३. स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मैपदेषु ७।२।७२॥**

एभ्यः सिच इडागमो भवति परस्मैपदेषु।

असावीत्, असोष्ट। असोष्यत्, असोष्यत। चिञ् चयने। चिनोति।

इति स्वादिप्रकरणम्।

---

३३१- कर्ता अर्थ में हुए सार्वधातुक प्रत्यय के परे होने पर स्वादिगण में पठित धातुओं से शप् को बाधकर श्नु होता है।

३३२- जिसके पूर्व में संयोग नहीं, ऐसा प्रत्यय का अवयव जो अकार, उससे परे हि का लुक् होता है।

३३३- स्तु, सु, धूञ् धातु से परे सिच् को इट् का आगम होता है परस्मैपद में।

इति स्वादिप्रकरणम्।

# अथ तुदादिप्रकरणम्

तुद व्यथने।

शा-विधायकं विधिसूत्रम्

**३३४. तुदादिभ्यः शः ३।१।७७॥**

कर्तरि सार्वधातुके तुदादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः शो भवति शपं प्रबाध्य। तुदति। तुंदते।

सकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३३५. झलो झलि ८।२।२६॥**

झलः परस्य सस्य लोपो भवति झलि परे।

अतौत्सीत्, अतौत्ताम्। अतुत्त। अतुत्साताम्। **मिल सङ्गमे।** मिलति। मिमेल।

नुमागमविधायकं विधिसूत्रम्

**३३६. शे मुचादीनाम् ७।१।५९॥**

मुच्-लिप्-विद्-लुप्-सिच्-कृत्-खिद्-पिशां नुमागमो भवति शे परे। **मुच्लृ मोचने।** मुञ्चति। मुञ्चते। मुमोच। मुमुचे। मोक्तासि। मोक्तासे। मुच्यात्। मुक्षीष्ट। अमुचत्, अमुक्त। अमुक्षाताम्। **विदलृ लाभे।** विन्दति। विन्दते। विवेद। विविदे। वेत्ता। वेत्स्यति। वेत्स्यते।

इति तुदादिप्रकरणम्

---

३३४- कर्ता अर्थ में हुए सार्वधातुक प्रत्यय के परे होने पर तुदादिगण में पठित धातुओं से शप् को बाधकर "श" होता है।

३३५- झल् से परे सकार का लोप होता है, झल् के परे रहने पर।

३३६- मुच्, लिप्, विद्,लुप्, सिच्, कृत्, खिद् और पिश् धातुओं को नुम् का आगम होता है, श-प्रत्यय के परे होने पर।

इति तुदादिप्रकरणम्।

# अथ रुधादिप्रकरणम्

रुधिर् आवरणे।

वार्तिकम्- इर इत्संज्ञा वाच्या।

श्नम्-विधायकं विधिसूत्रम्

**३३७. रुधादिभ्यः श्नम् ३।१।७८॥**

कर्तरि सार्वधातुके रुधादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः श्नम्भवति शपं प्रबाध्य।

धकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३३८. झषस्तथोर्धोऽधः ८।२।४०॥**

धा-धातुं विहाय झषः परयोस्तकारथकारयोः स्थाने धकारादेशो भवति। रुणद्धि।

झरो वैकल्पिकलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३३९. झरो झरि सवर्णे ८।४।६५॥**

हलः परस्य झरो वा लोपो भवति सवर्णे झरि।

श्नसोरल्लोपः- रुन्धः। रुन्धन्ति। रुणत्सि। रुन्धः। रुन्ध। रुणद्मि। रुन्ध्वः। रुन्ध्मः। रुन्धे। रुन्धाते। रुन्धते। रुन्त्से। रुन्धाथे। रुन्ध्वे। रुन्धे। रुन्ध्वहें। रुन्ध्महे। रुरोध-रुरुधे। रोद्धासि-रोद्धासे। रोत्स्यति-रोत्स्यते। रुणद्धु-रुन्धात्, रुन्धाम्, रुन्धन्तु। रुन्धि। रुणधानि। रुन्धाम्। रुन्धाताम्। रुन्त्स्व, रुणधै। रुणधावहै। रुणधामहै। अरुणत्। अरुन्धाम्। अरुन्ध। रुन्ध्यात्-रुन्धीत। रुध्यात्, रुत्सीष्ट। अरौत्सीत्। अरुद्ध। अरोत्स्यत्-अरोत्स्यत। भिदिर् विदारणे। भिनत्ति। छिदिर द्वैधीकरणे। छिनत्ति। युजिर् योगे। युनक्ति।

इति रुधादिप्रकरणम्।

---

वार्तिकम्- धातु के इर् की इत्संज्ञा होती है।

३३०- कर्ता अर्थ में हुए सार्वधातुक प्रत्यय के परे होने पर रुधादिगण में पठित धातुओं से शप् को बाधकर श्नम् होता है।

३३८-. धा-धातु को छोड़कर झष्-प्रत्याहार से परे तकार और थकार के स्थान पर धकार आदेश होता है।

३३९- सवर्ण झर् के परे होने पर हल् से परे झर् का विकल्प से लोप होता है।

इति रुधादिप्रकरणम्।

# अथ तनादिप्रकरणम्

तनु विस्तारे।

उ-विधायकं विधिसूत्रम्

**३४०. तनादिकृञ्भ्य उः ३।१।७९॥**

कर्तरि सार्वधातुके तनादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः कृञ्धातोश्च 'उ'-प्रत्ययो भवति शपं प्रबाध्य।

तनोति-तनुते। ततान-तेने। तनितासि-तनितासे। तनिष्यति-तनिष्यते। तनोतु-तनुताम्। अतनोत्-अतनुत। तनुयात्-तन्वीत। तन्यात्-तनिषीष्ट। अतानीत्-अतनिष्ट। अतनिष्यत्-अतनिष्यत। डुकृञ् करणे। करोति।

उकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३४१. अत उत्सार्वधातुके ६।४।११०॥**

उप्रत्ययान्तस्य कृञोऽकारस्य स्थाने उकारादेशो भवति सार्वधातुके किति ङिति।

कुरुतः। करोषि। कुरुथः। करोमि।

उकारलोपविधायकं सूत्रम्

**३४२. नित्यं करोतेः ६।४।१०८॥**

करोतेः प्रत्ययोकारस्य नित्यं लोपो भवति मकारवकारयोः परयोः।

कुर्वः। कुर्मः। कुरुते। कुर्वाते। कुर्वते। चकार-चक्रे। कर्तासि-कर्तासे।

---

३४०- कर्ता अर्थ में हुए सार्वधातुक प्रत्यय के परे होने पर तनादिगण में पठित धातुओं से और कृञ्-धातु से शप् को बाधकर 'उ' होता है।

३४१- सार्वधातुक कित् या ङित् के परे होने नर उप्रत्ययान्त कृ धातु के अकार के स्थान पर ह्रस्व उकार आदेश होता है।

३४२- मकार और वकार के परे होने पर कृ-धातु से परे प्रत्यय के उकार का नित्य से लोप होता है।

इडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**३४३. ऋद्धनोः स्ये ७।२।७०॥**

ऋतो हन्तेश्च परस्य स्यस्येडागमो भवति।

करिष्यति-करिष्यते। करोतु-कुरुताम्। अकरोत्-अकुरुत।

उलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३४४. ये च ६।४।१०९॥**

करोतेः परस्योकारस्य लोपो भवति यादौ प्रत्यये परे। कुर्यात्-कुर्वीत।

रिङादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३४५. रिङ् शयग्लिङ्क्षु ७।४।२८॥**

शे यकि यादावार्धधातुके लिङि च ऋतो रिङ् आदेशो भवति।

क्रियात्-कृषीष्ट। अकार्षीत्।

सिचो लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३४६. ह्रस्वादङ्गात् ८।२।२७॥**

झलि ह्रस्वादङ्गात्परस्य सस्य लोपो भवति।

अकृत। अकरिष्यत्-अकरिष्यत।

सुडागमविधायके विधिसूत्रे

**३४७. सम्परिभ्यां करोतौ भूषणे ६।१।१३७॥**

**३४८. समवाये च ६।१।१३८॥**

सम्परिपूर्वस्य कृधातोः सुडागमो भवति भूषणे सङ्घाते चार्थे।

संस्करोति। परिष्करोति। संस्कर्ता। मनु अवबोधने। मनुते। मेने। मनिता।

मनिष्यते। अमनुताम्। अमनुत। मन्वीत। मनिषीष्ट। अमनिष्ट। अमनिष्यत।

इति तनादिप्रकरणम्।

---

३४३- ह्रस्व ऋकारान्त धातु और हन् धातु से परे स्य को इट् का आगम होता है।

३४४- यकारादि प्रत्यय के परे होने पर कृ-धातु से परे प्रत्यय के उकार का लोप होता है।

३४५- श, यक् अथवा यकारादि आर्धधातुक लिङ् के परे होने पर ह्रस्व ऋकार को रिङ् आदेश होता है।

३४६- झल् के परे होने पर ह्रस्वान्त अङ्ग से परे सकार का लोप होता है।

३४७-३४८- सम् और परि उपसर्ग से परे कृञ् धातु को सुट् का आगम होता है, सजाना और इकट्ठा होना अर्थ हो तो।

इति तनादिप्रकरणम्।

# अथ क्र्यादिप्रकरणम्

डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये।

श्ना-विधायकं विधिसूत्रम्

**३४९. क्र्यादिभ्यः श्ना ३।१।८१॥**

कर्तरि सार्वधातुके परे क्र्यादिगणपठितेभ्यो धातुभ्यः श्ना भवति शपं प्रबाध्य।

ईदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३५०- ई हल्यघोः ६।४।११३॥**

श्नाभ्यस्तयोरातः स्थाने ईदादेशो भवति सार्वधातुके किति ङिति, न तु घोः। क्रीणीतः।

आतो लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३५१. श्नाभ्यस्तयोरातः ६।४।११२॥**

अनयोरातो लोपो भवति किति ङिति सार्वधातुके। क्रीणन्ति। क्रीणासि। क्रीणीथः। क्रीणीथ। क्रीणामि। क्रीणीवः। क्रीणीमः। क्रीणीते। क्रीणाते। क्रीणते। क्रीणीषे। क्रीणाथे। क्रीणीध्वे। क्रीणे। क्रीणीवहे। क्रीणीमहे। चिक्राय-चिक्रिये। क्रेतासि-क्रेतासे। क्रेष्यति-क्रेष्यते। क्रीणातु-क्रीणीताम्। अक्रीणात्-अक्रीणीत। क्रीणीयात्-क्रीणीत। क्रेयात्-क्रेषीष्ट। अक्रैषीत्-अक्रेष्ट। अक्रेष्यत्-अक्रेष्यत। प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च। पूञ् पवने। लूञ् छेदने।

ह्रस्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३५२. प्वादीनां ह्रस्वः ७।३।८०॥**

पूञ्-लूञ्-स्तॄञ्-कॄञ्-वॄञ्-धूञ्-शॄ-पॄ-वॄ-भॄ-मॄ-दॄ-जॄ-झॄ-नॄ-कॄ-ॠ-गॄ-ज्या-री-व्ली-प्लीनां चतुर्विंशतेः शिति ह्रस्वो भवति। पुनाति। पुनीते। लुनाति-लुनीते।

इति क्र्यादिप्रकरणम्।

---

३४९- कर्ता अर्थ में हुए सार्वधातुक प्रत्यय के परे होने पर क्र्यादिगण में पठित धातुओं से शप् को बाधकर 'श्ना' होता है।

३५०- हलादि कित्, ङित् सार्वधातुक के परे होने पर श्ना और अभ्यस्तसंज्ञक धातु के आकार के स्थान पर ईकार आदेश होता है

३५१- कित्, ङित् सार्वधातुक के परे होने पर श्ना और अभ्यस्तसंज्ञक धातु के आकार का लोप होता है।

३५२- शित् परे होने पर पूञ्, लूञ्, स्तॄञ्, कॄञ्, वॄञ्, धूञ्, शॄ, पॄ, वॄ, भॄ, मॄ, दॄ, जॄ, झॄ, नॄ, कॄ, ॠ, गॄ, ज्या, री, व्ली और प्ली धातुओं को ह्रस्व होता है।

# अथ चुरादिप्रकरणम्

चुर स्तेये।

णिच्-विधायकं विधिसूत्रम्

**३५३. सत्याप-पाश-रूप-वीणा-तूल-श्लोक-लोम-सेना-लोम-त्वच-वर्म-वर्ण-चूर्ण-चुरादिभ्यो णिच् ३।१।२५॥**

सत्याप-पाशादि-नामधातुभ्यश्चूरादिभ्यश्च स्वार्थे णिच् भवति।

धातुसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**३५४. सनाद्यन्ता धातवः ३।१।३२॥**

सनादयो णिङन्ताः प्रत्यया अन्ते येषां ते सर्वेऽपि धातुसंज्ञका भवन्ति।

**सन्-क्यच्-काम्यच्-क्यङ्-क्यषोऽथाचारक्विब्-णिज्यङौ तथा।**
**यगाय ईयङ् णिङ् चेति द्वादशामी सनादयः॥**

धातुत्वाल्लंडादयः। तिप्शबादयः। गुणायादेशौ। चोरयति।

आत्मनेपदविधायकं विधिसूत्रम्

**३५५. णिचश्च १।३।७४॥**

णिजन्तादात्मनेपदं भवति कर्तृगामिनि क्रियाफले। चोरयते।

वार्तिकम्- **कास्यनेकाच आम् वक्तव्यो लिटि।**

---

३५३- सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोम, त्वच, वर्म, वर्ण, चूर्ण आदि नामधातुओं और चुर् आदि गणपठित धातुओं से स्वार्थ में णिच् प्रत्यय होता है।

३५४- सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, क्यष्, आचार अर्थ में क्विप्, णिच्, यङ्, यक्, आय्, ईयङ् और णिङ् ये प्रत्यय अन्त में हों जिन धातु के, उन प्रकृति और प्रत्यय के समुदाय की भी धातुसंज्ञा होती है।

३५५- क्रिया का फल कर्ता को प्राप्त हो तो णिजन्त धातु से आत्मनेपद होता है।

**वार्तिकार्थः-** लिट् के परे होने पर कास् और अनेकाच् धातुओं से आम् होता है।

अयादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३५६. अयामन्ताल्वाय्येत्न्विष्णुषु ६।४।५५॥**

आम्-अन्त-आलु-आय्य-इत्नु-इष्णुषु परेषु णेरयादेशो भवति।

चोरयाञ्चकार-चोरयाञ्चक्रे। चोरयाम्बभूव। चोरयामास। चोरयितासि-चोरयितासे। चोरयिष्यति-चोरयिष्यते। चोरयतु-चोरयताम्। अचोरयत्-अचोरयत। चोरयेत्-चोरयेत।

णेर्लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३५७. णेरनिटि ६।४।५१॥**

अनिडादावार्धधातुके परे णेर्लोपो भवति। चोर्यात्-चोरयिषीष्ट।

ह्रस्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३५८. णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः ७।४।१॥**

चङ्परे णौ यदङ्गं तस्योपधाया ह्रस्वो भवति।

सन्वद्भावविधायकमतिदेशसूत्रम्

**३५९. सन्वल्लघुनि चङ्परेऽनग्लोपे ७।४।९३॥**

चङ्परे णौ यदङ्गं तस्य योऽभ्यासो लघुपरस्तस्य सनीव कार्यं भवति णावग्लोपे सति।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**३६०. दीर्घो लघोः ७।४।९४॥**

लघोरकारस्य दीर्घो भवति सन्वद्भावविषये।

अचूचुरत्, अचूचुरत। **कथ वाक्यप्रबन्धे।**

---

३५६- आम्, अन्त, आलु, आय्य, इत्नु और इष्णु के परे होने पर णि के स्थान पर अय् आदेश होता है।

३५७- इट् आदि में न हो ऐसे आर्धधातुक के परे रहते णि का लोप होता है।

३५८. चङ् परे होने पर जो णि, उसके परे रहते अङ्ग की उपधा को ह्रस्व होता है।

३५९- चङ् जिससे परे है ऐसे णि के परे रहते जो अङ्ग, उसके लघुपरक अभ्यास के स्थान पर वैसे कार्य होते हैं जैसे सन् प्रत्यय के परे रहते होते हैं यदि णि को मानकर किसी अक् का लोप न हुआ हो तो।

३६०- सन्वद्भाव के विषय में अभ्यास के लघु को दीर्घ हो।

अतो लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**३६१. अतो लोपः ६।४।४८।।**

आर्धधातुकोपदेशे यददन्तं तस्यातो लोपो भवति आर्धधातुके।

स्थानिवद्भावविधायकमतिदेशसूत्रम्

**३६२. अचः परस्मिन् पूर्वविधौ १।१।५७।।**

परनिमित्तोऽजादेशः स्थानिवद् भवति, स्थानिभूतादचः पूर्वविधौ कर्तव्ये। कथयति। अग्लोपित्वाद् दीर्घसन्वद्भावौ न। अचकथत्।

**गण संख्याने।** गणयति।

इति चुरादिप्रकरणम्।

---

३६१- आर्धधातुक प्रत्यय के उपदेश के समय जो अदन्त अङ्ग उसके अन्त्य अत् का लोप होता है आर्धधातुक प्रत्यय के परे होने पर।

३६२- पर को निमित्त मानकर हुआ जो अच् उसके स्थान पर जो आदेश वह स्थानिवद्भाव को प्राप्त होता है, स्थानिभूत अच् से पूर्व के स्थान में कोई विधि करनी हो तो।

इति चुरादिप्रकरणम्।

# अथ ण्यन्तप्रकरणम्

कर्तृसंज्ञा-विधायकं संज्ञासूत्रम्

**३६३. स्वतन्त्रः कर्ता १।४।५४॥**

क्रियायां स्वातन्त्र्येण विविक्षितोऽर्थः कर्ता कथ्यते।

हेतु-कर्तृसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**३६४. तत्प्रयोजको हेतुश्च १।४।५५॥**

कर्तुः प्रेरको हेतुसंज्ञको कर्तृसंज्ञकश्च भवति।

णिच्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**३६५. हेतुमति च ३।१।२६॥**

प्रयोजकव्यापारे धातोर्णिच् भवति।

भवन्तं प्रेरयति भावयति-भावयते। भावयाञ्चकार-भावयाञ्चक्रे। भावयाम्बभूव। भावयामास। भावयिता, भावयितासि-भावयितासे। भावयतु-भावयताम्। अभावयत्-अभावयत। भावयेत्-भावयेत। भाव्यात्-भावयिषीष्ट।

इत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३६६. ओः पुयण्ज्यपरे ७।४।८०॥**

सनि परे यदङ्गं तदवयवाभ्यासस्योकारस्य इदादेशो भवति, पवर्गयण्जकारेष्ववर्णपरेषु परतः।

परिभाषा- णिच्यच आदेशो न द्वित्वे कर्तव्ये।

अबीभवत्-अबीभवत। अभावयिष्यत्- अभावयिष्यत। स्था गतिनिवृत्तौ।

................................................................................

३६३- क्रिया की सिद्धि में स्वतन्त्रतया अर्थात् मुख्यतया कहे जाने वाले कारक की कर्तृसंज्ञा होती है अर्थात् वह कर्ता कहलाता है।

३६४- कर्ता को प्रेरणा देने वाले की हेतुसंज्ञा और कर्तृसंज्ञा दोनों होती है।

३६५- प्रेरक अर्थ विद्यमान होने पर धातु से णिच् प्रत्यय होता है।

३६६. सन् परे होने पर जो अङ्ग, उसके अवयव अभ्यास के उकार के स्थान पर इकार आदेश हो जाता है, यदि पवर्ग, यण्, जकार में से कोई परे हो और इनसे परे भी अकार हो तो।

पुगागमविधायकं विधिसूत्रम्

**३६७. अर्ति-ह्री-व्ली-री-क्नूयी-क्ष्माय्यातां पुग्णौ ७।३।३६॥**

एषां धातूनां पुगागमो भवति णौ परे। स्थापयति।

इदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३६८. तिष्ठतेरित् ७।४।५॥**

उपधाया इदादेशो भवति चङ्परे णौ। अतिष्ठिपत्।

इति ण्यन्तप्रकरणम्।

---

367- ऋ, ह्री, व्ली, री, क्नूयी, क्ष्माय्यी और आकारान्त धातुओं को पुक् का आगम होता है णि के परे होने पर।

368- चङ्-परक णि परे हो तो स्था-धातु की उपधा के स्थान पर ह्रस्व इकार आदेश होता है।

इति ण्यन्तप्रकरणम्।

# अथ सन्नन्तप्रकरणम्

सन्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**३६९. धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा ३।१।७॥**

समानकर्तृकाद्धातोरिच्छायामर्थे सन् भवति। पठ व्यक्तायां वाचि।

द्वित्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३७०. सन्यङोः ६।१।९॥**

सन्नन्तस्य यङन्तस्य च धातोरभ्यासस्य प्रथमस्यैकाचो द्वित्वं भवति, अजादिधातोस्तु द्वितीयैकाचः।

इत्वविधायकं विधिसूत्रम्

**३७१. सन्यतः ७।४।७९॥**

अभ्यासस्य अतः स्थाने इदादेशो भवति सनि परे। पिपठिषति। पिपठिषते। पिपठिषाञ्चकार। पिपठिषिता। पिपठिषिष्यति। पिपठिषतु। अपिपठिषत्। पिपठिषेत्। पिपठिष्यात्। अपिपठिषीत्। अपिपठिषिष्यत्।

इति सन्नन्तप्रकरणम्।

.................................................................................................

३६९- जो इष्-धातु का कर्म हो और इष्-धातु के साथ समानकर्तृक भी हो उस धातु से इच्छा अर्थ में विकल्प से सन् प्रत्यय होता है।

३७०- सन्नन्त और यङन्त धातु के प्रथम एकाच् को द्वित्व होता है, यदि वे अजादि हों तो उनके द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है।

३७१- अभ्यास के ह्रस्व अकार के स्थान पर ह्रस्व इकार आदेश होता है, सन् के परे होने पर।

इति सन्नन्तप्रकरणम्।

# अथ कृदन्ते कृत्यप्रकरणम्

अधिकारसूत्रम्

## ३७२. धातोः ३।१।९१॥

तृतीयाध्यायसमाप्तिपर्यन्तं ये प्रत्ययास्ते धातोः परे भवन्ति।

कृत्संज्ञाविधायकं विधिसूत्रम्

## ३७३. कृदतिङ् ३।१।९३॥

धातोरधिकारे जायमानास्तिङ्भिन्नाः प्रत्ययाः कृत्संज्ञका भवन्ति।

कृत्यसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ३७४. कृत्याः ३।१।९५॥

ण्वुल्तृचौ इति सूत्रात् पूर्वं ये प्रत्ययास्ते कृत्यसंज्ञका भवन्ति।

प्रत्ययार्थनिर्धारकं विधिसूत्रम्

## ३७५. कर्तरि कृत् ३।४।६७॥

कृत्प्रत्ययाः कर्तरि अर्थे भवन्ति। इति प्राप्ते-

प्रत्ययार्थनिर्धारकं विधिसूत्रम्

## ३७६. तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः ३।४।७०॥

कृत्य-क्त-खलर्थप्रत्ययाः भावे कर्मणि च भवन्ति।

तव्यतादिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ३७७. तव्यत्तव्यानीयरः ३।१।९६॥

धातोः तव्यत्-तव्य-अनीयर्-प्रत्यया भवन्ति।

भावेऽर्थे स्वभावत एकवचनं क्लीबत्वं च।

एधितव्यम्, एधनीयम् त्वया। चेतव्यश्चयनीयो वा धर्मस्त्वया।

---

३७२- तृतीय अध्याय समाप्ति तक जितने भी प्रत्यय बताये जायेंगे, वे सब धातु के बाद होते हैं।

३७३- 'धातोः' सूत्र के अधिकार में होने वाले तिङ् से भिन्न प्रत्ययों की कृत्संज्ञा होती है।

३७४- कृत्प्रत्ययों में ण्वुल्तृचौ से पहले आने वाले प्रत्ययों की कृत्यसंज्ञा होती है।

३७५- कृत्प्रत्यय कर्ता अर्थ में होते हैं।

३७६- कृत्य, क्त और खलर्थ प्रत्यय भाव और कर्म अर्थ में होते हैं।

३७७- धातु से तव्यत्, तव्य और अनियर् प्रत्यय होते हैं।

भाव में स्वाभाविक एकवचन और नपुंसकलिङ्ग हुआ करता है।

कृत्यल्युट्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**३७८. कृत्यल्युटो बहुलम् ३।३।११३॥**

कृत्यसंज्ञकाः प्रत्यया ल्युट् च बहुलंन भवन्ति।

क्वचित्प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः क्वचिद्विभाषा क्वचिदन्यदेव।
विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति॥

स्नान्त्यनेनेति स्नानीयं चूर्णम्। दीयतेऽस्मै दानीयो विप्रः।

यत्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**३७९. अचो यत् ३।१।९७॥**

अजन्ताद्धातोर्यत्-प्रत्ययो भवति। चेयम्। जेयम्।

ईदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३८०. ईद्यति ६।४।६५॥**

यति परे आतः स्थाने ईद् भवति। देयम्। पेयम्।

यत्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**३८१. पोरदुपधात् ३।१।९८॥**

पवर्गान्तादुपधाद्यत्प्रत्ययो भवति। ण्यतोऽपवादः। शप्यम्। लभ्यम्।

क्यप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**३८२. एति-स्तु-शास्-वृ-दृ-जुषः क्यप् ३।१।१०९॥**

इण्-स्तु-शास्-वृ-दृ-जुष्-धातुभ्यः क्यप्-प्रत्ययो भवति।

.....................................................................................................

३७८- कृत्य-संज्ञक प्रत्यय और ल्युट् प्रत्यय बहुल से होते हैं।

श्लोकार्थः- सूत्रों के विधान को अनेक प्रकार का समझकर विद्वान लोग बहुल के चार प्रकार के भेद बताते हैं- १- कहीं प्रवृत्त होना, २- कहीं प्रवृत्त न होना, ३- कहीं विकल्प से होना और ४- कहीं कुछ और ही हो जाना।

३७९- अजन्त धातु से यत् प्रत्यय होता है।

३८०- यत्-प्रत्यय के परे होने पर आकार के स्थान पर ईकार आदेश होता है।

३८१- ह्रस्व अकार उपधा में हो ऐसे पवर्गान्त धातुओं से यत् प्रत्यय होता है।

३८२- इण्, स्तु, शास्, वृ, दृ और जुष् धातु से क्यप् होता है।

तुगागमविधायकं विधिसूत्रम्

३८३. **ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् ६।१।७१।।**

पिति कृति परे ह्रस्वस्य तुगागमो भवति।

इत्यः। स्तुत्यः।

ण्यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

३८४. **ऋहलोर्ण्यत् ३।१।१२४।।**

ऋवर्णान्ताद् हलन्ताच्च धातोर्ण्यत्-प्रत्ययो भवति।

हार्यम्। धार्यम्। भोज्यम्।

**इति कृदन्ते कृत्यप्रकरणम्।**

---

३८३- पित् कृत् के परे होने पर ह्रस्व को तुक् का आगम होता है।

३८४- ऋवर्णान्त और हलन्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय होता है।

**इति कृदन्ते कृत्यप्रकरणम्।**

# अथ पूर्वकृदन्तप्रकरणम्

ण्वुल्तृच्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ३८५. ण्वुल्तृचौ ३।१।१३३॥

धातोः ण्वुल्तृचौ प्रत्ययौ भवतः।

अनाकावादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ३८६. युवोरनाकौ ७।१।१॥

यु-वु-एतयोः स्थाने अन-अक इत्यादेशौ भवतः। कारकः। कर्ता।

ल्यु-णिनि-अच्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ३८७. नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः ३।१।१३४॥

नन्द्यादेर्ल्युः, ग्रह्यादेर्णिनिः, पचादेरच् प्रत्यया भवन्ति।

नन्दयतीति नन्दनः। गृह्णातीति ग्राही। मन्त्रयत इति मन्त्री।

पचतीति पचः। पचादिराकृतिगणः।

कप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ३८८. इगुपध-ज्ञा-प्री-किरः कः ३।१।१३५॥

एभ्यो धातुभ्यः क-प्रत्ययो भवति। बुधः। कृशः। ज्ञः। प्रियः।

इदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ३८९. ऋृत इद्धातोः ७।१।१००॥

ऋृदन्तस्य धातोः ऋृकारस्य स्थाने इदादेशो भवति। किरः।

........................................................................................................

३८५- धातु-मात्र से ण्वुल् और तृच् प्रत्यय होते हैं।

३८६- यु और वु के स्थान पर क्रमशः अन और अक आदेश होते हैं।

३८७- नन्दि आदि धातुओं से ल्यु, ग्रह् आदि धातुओं से णिनि और पचादि धातुओं से अच् ये प्रत्यय होते हैं।

३८८- इक् उपधा में हो ऐसे धातु ज्ञा, प्री और कृ धातुओं से क प्रत्यय होता है।

३८९- ऋृकारान्त धातु के ऋृकार के स्थान पर ह्रस्व इकार आदेश होता है।

उपपदसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ३९०. तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् ३।१।९२॥

धातोरधिकारे कर्मणीत्यादौ सप्तमीस्थं कुम्भादिपदम् उपपदसंज्ञकं भवति।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ३९१. कर्मण्यण् ३।२।१॥

कर्मण्युपपदे धातोरण् प्रत्ययो भवति। कुम्भं करोतीति कुम्भकारः।

कप्रत्यय विधायकं विधिसूत्रम्

## ३९२. आतोऽनुपसर्गे कः ३।२।३॥

आदन्ताद्धातोरनुपसर्गात् कर्मण्युपपदे क-प्रत्ययो भवति।

अणोऽपवादः। गोदः। कम्बलदः। धनदः।

क्विप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ३९३. क्विप् च ३।२।७६॥

धातोः क्विप्-प्रत्ययश्च दृश्यते (भवति)।

वकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

## ३९४. वेरपृक्तस्य ६।१।६७॥

अपृक्तस्य वस्य लोपो भवति। शास्त्रकृत्। मधुलिट्। विषभुक्।

निष्ठासंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ३९५. क्तक्तवतू निष्ठा १।१।२६॥

एतौ निष्ठासंज्ञकौ भवतः।

निष्ठाप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ३९६. निष्ठा ३।२।१०२॥

भूतार्थे धातोः निष्ठासंज्ञकप्रत्ययौ भवतः। तत्र भावकर्मणोः क्तः, कर्तरि क्तवतुः।

स्नातं मया। स्तुतस्त्वया। विश्वं कृतवान् विष्णुः।

---

३९०- धातोः सूत्र के अधिकार में कर्मण्यण् आदि सूत्रों में सप्तमी विभक्ति निर्दिष्ट कुम्भ आदि पदों की उपपदसंज्ञा होती है।

३९१- कर्म उपपद होने पर धातु से अण् प्रत्यय होता है।

३९२- कर्म उपपद होने पर उपसर्ग रहित आदन्त धातु से क प्रत्यय होता है।

३९३- धातु से क्विप् प्रत्यय भी होता है।

३९४- अपृक्तसंज्ञक वकार का लोप होता है।

३९५- क्त और क्तवतु प्रत्ययों की निष्ठासंज्ञा होती है।

३९६- भूतकाल में धातु से निष्ठासंज्ञक प्रत्यय होते हैं।

नकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३९७. रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः ८।२।४२।।**

रदाभ्यां परस्य निष्ठासंज्ञाघटकतकारस्य तस्मात्पूर्वस्य धातोर्दस्य च स्थाने नकारादेशो भवति। छिन्नः। भिन्नः।

शतृशानचादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**३९८. लटः शतृशानचौ (अप्रथमा) समानाधिकरणे ३।२।१२४।।**

लटः स्थाने वा शतृशानचावादेशौ भवतो विभक्तिसमानाधिकरणे। रामः पठन् गच्छति। पचन्तं चैत्रं पश्य।

मुगागमविधायकं विधिसूत्रम्

**३९९. आने मुक् ७।२।८२।।**

अदन्ताङ्गस्य मुमागमो भवति आने परे। पचमानं चैत्रं पश्य।

सत्संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४००. तौ सत् ३।२।१२७।।**

तौ शतृ-शानचौ सत्संज्ञकौ भवतः।

वैकल्पिकसत्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४०१. लृटः सद्वा ३।३।१४।।**

लृटः स्थाने सद्वा भवति। करिष्यन्तं करिष्यमाणं चैत्रं पश्य।

इति पूर्वकृदन्तप्रकरणम्।

---

३९७- रकार और दकार से परे निष्ठासंज्ञा के घटक तकार और उससे पूर्व धातु के दकार के स्थान पर नकार आदेश होता है।

३९८- लट् के स्थान पर शतृ और शानच् आदेश होते हैं समानविभक्तिक में।

३९९- अदन्त अङ्ग को मुक् का आगम होता है, आन के परे होने पर।

४००- शतृ और शानच् की सत् संज्ञा होती है।

४०१- लृट् के स्थान पर विकल्प से सत्-संज्ञक (शतृ-शानच्) आदेश होते हैं।

इति पूर्वकृदन्तप्रकरणम्।

# अथ कृदन्त उणादिप्रकरणम्

उणादिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४०२. उणादयो बहुलम् ३।३।१।।**

धातोरुणादिप्रत्यया बहुलं भवन्ति।

संज्ञासु धातुरूपाणि प्रत्ययाश्च ततः परे।
कार्याद्विद्यादनूबन्धमेतच्छास्त्रमुणादिषु।।

उण्प्रत्ययविधायकं शाकटायनसूत्रम्

**कृ-वा-पा-जि-मि-स्वदि-साध्यशूभ्य उण्।**

करोतीति कारुः। वातीति वायुः। पायुर्गुदम्। जायुरौषधम्। मायुः पित्तम्। स्वादुः। साध्नोति परकार्यमिति साधुः। आशु शीघ्रम्।

इत्युणादिप्रकरणम्।

---

**४०२-** धातु से उण् आदि प्रत्यय बहुल से होते हैं।

**श्लोकार्थः-** संज्ञाओं में धातुओं से परे प्रत्ययों की कल्पना करनी चाहिए। पुनः जिस प्रकार का कार्य दिखाई दे, तदनुसार प्रत्ययों के साथ वैसे अनुबन्धों को भी जोड़ लेना चाहिए। संक्षेप में उणादियों में यही कुछ ही शासनीय होता है।

**शाकटायनसूत्रार्थः-** कृ, वा, पा, जि, मि, स्वद्, साध् और अश् धातुओं से परे उण् प्रत्यय होता है।

इत्युणादिंप्रकरणम्।

# अथोत्तरकृदन्तप्रकरणम्

तुमुन्ण्वुल्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४०३. तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् ३।३।१०।।**

क्रियार्थायां क्रियायामुपपदे भविष्यत्यर्थे धातोस्तुमुन्ण्वुलौ प्रत्ययौ भवतः।

तुमुनः मान्तत्वात् कृन्मेजन्त इत्यव्ययसंज्ञा।

पठितुं गच्छति। कृष्णं दर्शको याति।

नङ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४०४. यज-याच-यत-विच्छ-प्रच्छ-रक्षो नङ् ३।३।९०।।**

एभ्यो धातुभ्यो नङ्-प्रत्ययो भवति।

यज्ञः। याच्ञा। यत्नः। विश्नः। प्रश्नः। रक्ष्णः।

किप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४०५. उपसर्गे घोः किः ३।३।९२।।**

उपसर्गे उपपदे दा-धा-धातुभ्यां कि-प्रत्ययो भवति भावे।

प्रधिः। विधिः।

क्तिन्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४०६. स्त्रियां क्तिन् ३।३।९४।।**

स्त्रीलिङ्गे भावे क्तिन् भवति। घञोऽपवादः। कृतिः। स्तुतिः।

---

४०३- एक क्रिया के लिए दूसरी क्रिया समीप में होने पर भविष्यत् काल में धातुं से परे तुमुन् और ण्वुल् प्रत्यय होते हैं।

४०४- यज्, याच्, यत, विश्, प्रच्छ्, रक्ष् धातुओं से नङ्-प्रत्यय होता है।

४०५- उपसर्ग उपपद होने पर घुसंज्ञक दा और धा धातु से कि प्रत्यय होता है।

४०५- स्त्रीत्वविशिष्ट भाव अर्थ में धातु से क्तिन् प्रत्यय होता है।

वार्तिकम्- ऋल्वादिभ्यः क्तिन्निष्ठावद्वाच्यः। तेन नत्वम्।
कीर्णिः। लूनिः। धूनिः।

वार्तिकम्- सम्पदादिभ्यः क्विप्। सम्पत्। विपत्। आपत्।

वार्तिकम्- क्तिन्नपीष्यते। सम्पत्तिः। विपत्तिः।

क्त-ल्युट्-प्रत्ययविधायके विधिसूत्रे

**४०७. नपुंसके भावे क्तः ३।३।११४॥**

**४०८. ल्युट् च ३।३।११५॥**

नपुंसके भावेऽर्थे क्त-ल्युट्-प्रत्ययौ भवतः। हसितम्। हसनम्।

घ-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४०९. पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण ३।३।११८॥**

संज्ञायां प्रायेण घ-प्रत्ययो भवति पुंसि। आकरः। स्मरः।

घञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४१०. हलश्च ३।३।१२१॥**

करणाधिकरणयोर्हलन्ताद्धातोर्घञ् भवति संज्ञायां पुंसि।
रमन्ते योगिनोऽस्मिन्निति रामः। प्रसीदन्त्यत्रेति प्रासादः।

वार्तिकम्- उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम्।

---

वार्तिकार्थ- ऋवर्णान्त धातु और लू आदि धातुओं से परे क्तिन् प्रत्यय निष्ठा की तरह हो जाता है।

वार्तिकार्थ- सम्पद् आदि से क्विप् प्रत्यय होता है।

वार्तिकार्थ- सम्पद् आदि से क्तिन् भी होता है।

४०७-४०८- नपुसंकलिङ्ग में भाव अर्थ होने पर धातु से क्त और ल्युट् प्रत्यय होते हैं।

४०९- पुँल्लिङ्ग में संज्ञा अर्थ में प्रायः घ-प्रत्यय होता है।

४१०- करण और अधिकरण कारकों में हलन्त धातुओं से घञ् होता है भाव एवं संज्ञा अर्थ में।

वार्तिकार्थः- उपसर्ग को दीर्घ होता है बहुल से अमनुष्य अर्थ होने पर।

क्त्वा-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४११. समानकर्तृकयोः पूर्वकाले ३।४।२१॥**

समानकर्तृकयोर्धात्वर्थयोः पूर्वकाले विद्यमानाद्धातोः क्त्वा भवति।

रामो भुक्त्वा व्रजति। भुक्त्वा पीत्वा व्रजति।

ल्यबादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**४१२. समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् ७।१।३७॥**

अव्ययपूर्वपदेऽनञ्समासे क्त्वास्थाने ल्यबादेशो भवति।

प्रकृत्य। सङ्गम्य। अकृत्वा।

इति उत्तरकृदन्तप्रकरणम्।

---

४११- जिन दो धातुओं के अर्थों का कर्ता एक हो, उनमें से जिस धातु का अर्थ पूर्वकाल में स्थित हो उस धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है।

४१२- जिस समास के पूर्वपद में नञ् से भिन्न कोई अन्य अव्यय स्थित हो तो उस समास में क्त्वा के स्थान पर ल्यप् आदेश होता है।

इति उत्तरकृदन्तप्रकरणम्।

# अथ कारकप्रकरणम्

प्रथमाविभक्तिविधायकं विधिसूत्रम्

**४१३. प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा २।३।४६॥**

नियतोपस्थिकः प्रातिपदिकार्थः। मात्रशब्दस्य प्रत्येकं योगः।

प्रातिपदिकार्थमात्रे लिङ्गमात्राधिक्ये परिमाणमात्रे सङ्ख्यामात्रे च प्रथमा भवति।

प्रातिकार्थमात्रे- उच्चैः। नीचैः। कृष्णः। श्रीः। ज्ञानम्।

लिङ्गमात्राद्याधिक्ये- तटः, तटी, तटम्।

परिमाणमात्रे- द्रोणो व्रीहिः।

वचनं सङ्ख्या- एकः, द्वौ, बहवः।

सम्बोधने प्रथमाविभक्तिविधायकं विधिसूत्रम्

**४१४. सम्बोधने च २।३।४७॥**

सम्बोधने प्रथमा भवति। हे राम।

कर्मसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४१५. कर्तुरीप्सिततमं कर्म १।४।४९॥**

कर्तुः क्रियया आप्तुमिष्टतमं कारकं कर्मसंज्ञकं भवति।

द्वितीयाविभक्तिविधायकं विधिसूत्रम्

**४१६. कर्मणि द्वितीया २।३।२॥**

अनुक्ते कर्मणि द्वितीया भवति। हरिं भजति।

उक्ते कर्मणि तु प्रथमैव- हरिः सेव्यते। लक्ष्म्या सेवितो हरिः।

---

४१३- प्रातिपदिकार्थमात्र में, लिङ्गमात्र की अधिकता होने पर भी, परिमाणमात्र में और सङ्ख्यामात्र में प्रथमा विभक्ति होती है।

४१४- सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति होती है।

४१५- कर्ता क्रिया के द्वारा जिस वस्तु को अत्यन्त चाहता है, उस कारक की कर्मसंज्ञा होती है।

४१६- अनुक्त कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है।

कर्मसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ४१७. अकथितं च १।४।५१॥

अपादानादिविशेषैरविवक्षितं कारकं कर्मसंज्ञकं भवति।

दुह्-याच्-पच्-दण्ड्-रुधि-प्रच्छि-चि-ब्रू-शासु-जि-मथ्-मुषाम्।
कर्मयुक् स्यादकथितं तथा स्यान्नी-हृ-कृष्-वहाम्॥

गां दोग्धि पयः। बलिं याचते वसुधाम्

तण्डुलानोदनं पचति। गर्गान् शतं दण्डयति।

व्रजमवरुणद्धि गाम्। माणवकं पन्थानं पृच्छति।

वृक्षमवचिनोति फलानि। माणवकं धर्मं ब्रूते शास्ति वा।

शतं जयति देवदत्तम्। सुधां क्षीरनिधिं मथ्नन्ति।

देवदत्तं शतं मुष्णाति। ग्राममजां नयति हरति कर्षति वहति।

अर्थनिबन्धनेयं संज्ञा।

बलिं भिक्षते वसुधाम्। माणवकं धर्मं भाषते अभिधत्ते वक्तीत्यादि।

कर्मसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ४१८. गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणि कर्ता स णौ १।४।५२॥

गत्यर्थानां बुद्ध्यर्थानां भोजनार्थानां शब्दकर्मणाम् अकर्मकाणाञ्चाण्यन्ते यः कर्ता ण्यन्ते स कर्मसंज्ञको भवति।

रामः कृष्णं गृहं गमयति। आचार्यश्छात्रं कौमुदीं बोधयति।

माता पुत्रं क्षीरान्नं भोजयति। गुरुः शिष्यान् वेदार्थान् पाठयति।

कौशल्या रामं शाययति।

कर्तृसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ४१९. स्वतन्त्रः कर्ता १।४।५४॥

क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितस्यार्थस्य कर्तृसंज्ञा भवति।

---

४१७- जब किसी कारक की अपादान आदि संज्ञा न कहनी हो तो उसकी भी कर्मसंज्ञा होती है।

४१८- गति अर्थ वाले धातु, ज्ञान अर्थ वाले धातु, भोजन अर्थ वाले धातु, शब्द सम्बन्धी कर्म वाले धातु और अकर्मक धातुओं के अण्यन्त अवस्था के कर्ता की ण्यन्त अवस्था में कर्मसंज्ञा होती है।

४१९- क्रिया में स्वतन्त्र रूप से विवक्षित अर्थ की कर्ता संज्ञा होती है।

करणसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ४२०. साधकतमं करणम् १।४।४२॥

क्रियासिद्धौ अत्यन्तसहायकस्य कारकस्य करणसंज्ञा भवति।

तृतीयाविभक्तिविधायकं विधिसूत्रम्

## ४२१. कर्तृकरणयोस्तृतीया २।३।१८॥

अनभिहिते कर्तरि करणे च तृतीया भवति।

बालकः कन्दुकेन क्रीडति। रामेण बाणेन हतो बाली।

सम्प्रदानसंज्ञाविधायकं विधिसूत्रम्

## ४२२. कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम् १।४।३२॥

कर्ता दानादिकर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानसंज्ञको भवति।

चतुर्थीविभक्तिविधायकं विधिसूत्रम्

## ४२३. चतुर्थी सम्प्रदाने २।३।१३॥

सम्प्रदाने चतुर्थी भवति। विप्राय गां ददाति। रजकस्य वस्त्रं ददाति।

वार्तिकम्- तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या। गृहाय इष्टिकाः सन्ति।

शब्दानां योगे चतुर्थीविधायकं विधिसूत्रम्

## ४२४. नमस्स्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च २।३।१६॥

नमस्-स्वस्ति-स्वाहा-स्वधा-अलम्-वषड्योगेऽपि चतुर्थी भवति।

हरये नमः। प्रजाभ्यः स्वस्ति। अग्नये स्वाहा। पितृभ्यः स्वधा।

अलमिति पर्याप्त्यर्थग्रहणम्। तेन दैत्येभ्यो हरिरलं प्रभुः समर्थः शक्त इत्यादि।

अपादानसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ४२५. ध्रुवमपायेऽपादानम् १।४।२४॥

पृथक्करणे यस्ताद् वियोगस्तदपादानं भवति।

---

४२०- क्रिया की सिद्धि में अत्यन्त सहायक कारक की करणसंज्ञा होती है।

४२१- अनुक्त कर्ता और अनुक्त करण में तृतीया विभक्ति होती है।

४२२- कर्ता दान आदि कर्म के द्वारा जिसको जोड़ता है, उसकी सम्प्रदानसंज्ञा होती है।

४२३- सम्प्रदान में चतुर्थी होती है।

वार्तिकार्थः- तदर्थ में चतुर्थी होती है।

४२४- नमस्, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम्, वषट् के योग में भी चतुर्थी होती है।

४२५- अलग होने में जिससे अलगाव हो उसकी अपादानसंज्ञा होती है।

पञ्चमीविभक्तिविधायकं विधिसूत्रम्

**४२६. अपादाने पञ्चमी २।३।२८॥**

अपादाने पञ्चमी भवति। ग्रामादायाति। धावतोऽश्वात् पतति।

षष्ठीविभक्तिविधायकं विधिसूत्रम्

**४२७. षष्ठी शेषे २।३।५०॥**

कारकादिभिन्नः स्वस्वामिभावादिसम्बन्धः शेषः, तत्र षष्ठी भवति।

राज्ञः पुरुषः। मम गृहम्। वृक्षस्य शाखा। पितुः पुत्रम्। सुवर्णस्य कङ्कणम्।

अधिकरणसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४२८. आधारोऽधिकरणम् १।४।४५॥**

कर्तृकर्मनिष्ठाधारस्य कारकस्य अधिकरणसंज्ञा भवति।

सप्तमीविधायकं विधिसूत्रम्

**४२९. सप्तम्यधिकरणे च २।३।३६॥**

अधिकरणे दूरान्तिकार्थेभ्यश्च सप्तमी भवति।

औपश्लेषिको वैषयिकोऽभिव्यापकश्चेत्याधारस्त्रिधा।

कटे आस्ते। स्थाल्यां पचति। मोक्षे इच्छास्ति। सर्वस्मिन्नात्मास्ति।

वनस्य दूरे, ग्रामस्य समीपे।

इति कारकप्रकरणम्।

---

४२६- अपादान में पञ्चमी-विभक्ति होती है।

४२७- कारक, प्रातिपदिक से भिन्न स्व-स्वामिभाव आदि जो सम्बन्ध, उसे शेष कहते हैं और शेष अर्थ में षष्ठी विभक्ति होती है।

४२८- कर्ता और कर्म में निष्ठ क्रिया के आधार की अधिकरणसंज्ञा होती है।

४२९- अधिकरण में तथा दूर और समीप वाचक शब्द में सप्तमी-विभक्ति होती है। आधार तीन प्रकार के होते हैं- औपश्लेपिक, वैषयिक और अभिव्यापक।

इति कारकप्रकरणम्।

# अथ समासप्रकरणम्

## तत्रादौ केवल-समासः

समसनं समासः। शब्दतोऽर्थतश्चानेकपदानामेकपदीभवनं समासः।

समासः पञ्चधा।

स च विशेषसंज्ञाविनिर्मुक्तः केवलसमासः प्रथमः॥१॥

प्रायेण पूर्वपदार्थप्रधानोऽव्ययीभावो द्वितीयः॥२॥

प्रायेणोत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषस्तृतीयः॥३॥

प्रायेणान्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिश्चतुर्थः॥४॥

प्रायेणोभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः पञ्चमः॥५॥

तत्पुरुषभेदः कर्मधारयः। कर्मधारयभेदो द्विगुः।

परिभाषासूत्रम्

**४३०. समर्थः पदविधिः २।१।१॥**

पदसम्बन्धी विधिः समर्थमाश्रित्य भवति।

.....................................................................................................

अनेकपदों को शब्द और अर्थ से एकपद होना ही समास है।

समास पाँच हैं- किसी संज्ञा से रहित सामान्य केवल-समास।

पूर्व-पद  का अर्थ प्रधान हो जिसमें वह अव्ययीभाव समास।

प्रायः उत्तर-पद का अर्थ प्रधान हो जिसमें वह तत्पुरुषसमास।

प्रायः अन्य पद का अर्थ प्रधान हो जिसमें वह बहुव्रीहिसमास।

जिसमें दोनों पदों का अर्थ प्रधान हो वह द्वन्द्वसमास है।

तत्पुरुष का ही एक भेद कर्मधारय-समास और कर्मधारय का ही एक भेद द्विगुसमास है।

४३०- पदसम्बन्धी विधि समर्थ पदों को लेकर के ही होती है।

समासाधिकारसूत्रं संज्ञासूत्रं च

**४३१. प्राक्कडारात्समासः २।१।३॥**

'कडारा कर्मधारये' इत्यतः प्राक् समास इत्यधिक्रियते।

परार्थाभिधानं वृत्तिः। कृत्तद्धितसमासैकशेषसनाद्यन्तधातुरूपाः पञ्चवृत्तयः। वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः, स लौकिकोऽलौकिकश्च।

समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४३२. सह सुपा २।१।४॥**

सुबन्तं समर्थेन सुबन्तेन सह वा समस्यते।

सुपो लुग्विधायकं विधिसूत्रम्

**४३३. सुपो धातुप्रातिपदिकयोः २।४।७१॥**

धातुप्रातिपदिकयोरवयवस्य सुपो लुग् भवति।

'पूर्वं भूतः' इति लौकिकविग्रहवाक्यं, 'पूर्व अम् भूत सु' इत्यलौकिकवाक्यम्। भूतपूर्वे चरडितिनिर्देशात् भूतशब्दस्य पूर्वनिपातः। भूतपूर्वः।

इति केवलसमासप्रकरणम्।

---

४३१- इस सूत्र के बाद 'कडारा कर्मधारये' से पहले के सूत्रों में 'समास' का अधिकार है।

एकार्थिभावरूप विशिष्ट अर्थ का जिस के द्वारा कथन किया जाता हैं उसे 'वृत्ति' कहते हैं।

वृत्ति पाँच प्रकार की होती है- कृदन्तवृत्ति, तद्धितवृत्ति, समासवृत्ति, एकशेषवृत्ति और सनाद्यन्तधातुवृत्ति।

वृत्ति के अर्थ का बोध कराने के लिए जो वाक्य होता है उसे विग्रह कहते हैं, वह लौकिक और अलौकिक दो प्रकार का होता है।

४३२- सुबन्त का समर्थ सुवन्त के साथ विकल्प से समास होता है।

४३३- धातु और प्रातिपदिक के अवयव सुप् का लुक् होता है।

इति केवलसमासप्रकरणम्।

# अथाव्ययीभावसमासप्ररणम्

अधिकारसूत्रम्

**४३४. अव्ययीभावः २।१।५॥**

तत्पुरुषात्पूर्वमव्ययीभावोऽधिक्रियते।

समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४३५. अव्ययं विभक्ति-समीप-समृद्धि-व्यृद्ध्यर्थाभावात्ययासम्प्रति-शब्दप्रादुर्भाव-पश्चाद्यथानुपूर्व्य-यौगपद्य-सादृश्य-सम्पत्ति-साकल्यान्तवचनेषु २।१।६॥**

विभक्त्यर्थादिषु वर्तमानमव्ययं समर्थेन सुबन्तेन सह नित्यं समस्यते सोऽव्ययीभावः। विभक्तौ- 'हरि ङि अधि' इति स्थितौ।

उपसर्जनसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४३६. प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम् १।२।४३॥**

समासशास्त्रे प्रथमानिर्दिष्टमुपसर्जनसंज्ञकं भवति।

पूर्वप्रयोगविधायकं विधिसूत्रम्

**४३७. उपसर्जनं पूर्वम् २।२।३०॥**

समासे उपसर्जनस्य पूर्वप्रयोगो भवति। अधिहरि।

नपुंसकविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४३८. अव्ययीभावश्च २।४।१८॥**

अव्ययीभावस्य नपुंसकत्वं भवति।

---

४३४- तत्पुरुषः से पहले अव्ययीभाव का अधिकार है।

४३५- विभक्ति, समीप, समृद्धि, व्यृद्धि(वृद्धि का अभाव), अर्थाभाव, अत्यय, असम्प्रति, शब्दप्रादुर्भाव, पश्चात्, यथा, आनुपूर्व्य, यौगपद्य, सादृश्य, सम्पत्ति, साकल्य और अन्त अर्थो में विद्यमान अव्यय का समर्थ सुबन्त के साथ नित्य से समास होता है।

४३६- समासविधायक सूत्र में जो प्रथमा-विभक्ति, उसके द्वारा निर्दिष्ट शब्द की उपसर्जनसंज्ञा होती है।

४३७- समास में उपसर्जनसंज्ञक का पूर्व में प्रयोग होता है।

४३८- अव्ययीभाव-समास होने पर नपुंसकलिङ्ग होता है।

ह्रस्वविधायकं विधिसूत्रम्

**४३९. ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य १।२।४७।।**

नपुंसके अजन्तस्य प्रातिपदिकस्य ह्रस्वो भवति।

सुपो लुङ्निषेधविधायकं अमादेशविधायकं च विधिसूत्रम्

**४४०. नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः २।४।८३।।**

अदन्तादव्ययीभावात्सुपो न लुक्, तस्य पञ्चमीं विना अमादेशश्च भवति।

गाः पातीति गोपास्तस्मिन्नित्यधिगोपम्।

बहुलेनाम्भावविधायकं विधिसूत्रम्

**४४१. तृतीयासप्तम्योर्बहुलम् २।४।८४।।**

अदन्तादव्ययीभावात्तृतीयासप्तम्योर्बहुलम् अम्भावो भवति।

अधिगोपेन, अधिगोपे, अधिगोपम्। कृष्णस्य समीपम्- उपकृष्णम्।

मद्राणां समृद्धिः- सुमद्रम्। यवनानां व्यृद्धिः- दुर्यवनम्।

मक्षिकाणामभावो निर्मक्षिकम्। हिमस्यात्ययोऽतिहिमम्।

निद्रा सम्प्रति न युज्यते- अतिनिद्रम्। हरिशब्दस्य प्रकाशः- इतिहरि।

विष्णोः पश्चात्- अनुविष्णु।

योग्यतावीप्सापदार्थानतिवृत्तिसादृश्यानि यथार्थाः। रूपस्य योग्यमनुरूपम्।

अर्थमर्थं प्रति प्रत्यर्थम्। शक्तिमनतिक्रम्य यथाशक्ति।

सादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**४४२. अव्ययीभावे चाकाले ६।३।८१।।**

अव्ययीभावे सहस्य स्थाने सादेशो भवति न तु काले।

हरेः सादृश्यं सहरि। जेष्ठस्यानुपूर्व्येणानुजेष्ठम्। चक्रेण युगपत् सचक्रम्।

सदृशः सख्या ससखि। अग्निग्रन्थपर्यन्तमधीते साग्नि।

इत्यव्ययीभावप्रकरणम्।

---

४३९- नपुंसकलिङ्ग में अजन्त प्रातिपदिक को ह्रस्व होता है।

४४०- अदन्त अव्ययीभाव से परं सुप् का लुक् नहीं होता किन्तु पञ्चमीविभक्ति को छोड़कर शेप सुप् के स्थान पर अम् आदेश होता है।

४४१- अदन्त अव्ययीभाव से परे तृतीया और सप्तमी के स्थान पर बहुल से अम् आदेश होता है।

४४२- अव्ययीभाव समास में सह के स्थान पर स आदेश होता है यदि कालविशेष का वाचक उत्तरपद में न हो तो।

इत्यव्ययीभावप्रकरणम्

# अथ तत्पुरुष-समास-प्रकरणम्

अधिकारसूत्रम्

**४४३. तत्पुरुषः २।१।२२॥**

बहुव्रीहेः पूर्वं तत्पुरुषोऽधिक्रियते।

द्वितीयातत्पुरुष-समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४४४. द्वितीया श्रितातीत-पतित-गतात्यस्त-प्राप्तापन्नैः २।१।२४॥**

द्वितीयान्तं श्रितादिप्रकृतिकैः सुबन्तैः सह नित्यं वा समस्यते, स तत्पुरुषः। कृष्णं श्रितः कृष्णश्रितः। अरण्यातीतः। कूपपतितः। ग्रामगतः। सुखप्राप्तः। दुःखापन्नः।

तृतीयातत्पुरुष-समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४४५. तृतीया तत्कृतार्थेन गुणवचनेन २।१।३०॥**

तृतीयान्तं तृतीयान्तार्थकृतगुणवचनेनार्थशब्देन च सह वा समस्यते स तत्पुरुषः। शङ्कुलया खण्डः शण्कुलाखण्डः। धान्येनार्थो धान्यार्थः।

चतुर्थीतत्पुरुषसमासविधायकं विधिसूत्रम्

**४४६. चतुर्थी तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः २।१।३६॥**

चतुर्थ्यन्तं चतुर्थ्यन्तार्थाय यत्तद्वाचिना अर्थ-बलि-हित-सुख-रक्षित-शब्दैश्च समर्थैः सह वा समस्यते, स तत्पुरुषः। यूपाय दारु यूपदारु। द्विजाय अयं द्विजार्थः सूपः। भूतेभ्यो बलिर्भूतबलिः। गोहितम्। गोसुखम्। गोरक्षितम्।

---

४४३- बहुव्रीहि से पहले तत्पुरुषः का अधिकार है।

४४४- द्वितीयान्त का श्रित, अतीत, पतित, गत, अत्यस्त, प्राप्त और आपन्न प्रकृतिक समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास होता है, उसे तत्पुरुष कहते हैं।

४४५- तृतीयान्त सुबन्त, तृतीयान्तार्थ के द्वारा कृत जो गुण-वाचक शब्द के साथ और अर्थ-शब्द के साथ विकल्प से समास होता है, उसे तत्पुरुष कहते हैं।

४४६- चतुर्थ्यन्त शब्द का चतुर्थ्यन्त के लिए जो शब्द उसके साथ तथा अर्थ, बलि, हित, सुख और रक्षित शब्दों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है, उसे तत्पुरुषसमास कहते हैं।

पञ्चमीतत्पुरुषसमासविधायकं विधिसूत्रम्

**४४७. पञ्चमी भयेन २।१।३७।।**

पञ्चम्यन्तं सुबन्तं भयवाचकेन समर्थेन सुबन्तेन सह वा समस्यते, स तत्पुरुषः। चोराद्भयं चोरभयम्। वृकाद् भीर्वृकभीः। भयाद् भीतो भयभीतः। सिंहाद् भीतिः सिंहभीतिः।

षष्ठीतत्पुरुष-समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४४८. षष्ठी २।२।८।।**

समर्थेन सुबन्तेन सह षष्ठ्यन्तं पदं वा समस्यते, स तत्पुरुषः।

राज्ञः पुरुषो राजपुरुषः। आत्मनो ज्ञानम् आत्मज्ञानम्। मनसो विकारो मनोविकारः। सतां सङ्गतिः सत्सङ्गतिः।

सप्तमीतत्पुरुष-समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४४९. सप्तमी शौण्डैः २।१।४०।।**

सप्तम्यन्तं शौण्डादिभिः सह वा समस्यते, स तत्पुरुषः।

अक्षेषु शौण्डः, अक्षशौण्डः। काव्येषु निपुणः काव्यनिपुणः।

द्वितीयादीनां योगविभागाद् द्वितीयातृतीयाचतुर्थीपञ्चमीसप्तमीविभक्तीनां प्रयोगवशात् समासो भवति। वेदं विद्वान् वेदविद्वान्। मदेन अन्धो मदान्धः। धर्माय नियमो धर्मनियमः। द्विजाद् इतरो द्विजेतरः। भुवने विदितो भुवनविदितः।

कर्मधारयसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४५०. तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः १।२।४२।।**

समानविभक्तिकस्तत्पुरुषः कर्मधारयसंज्ञको भवति।

.....................................................................................................

४४७- पञ्चम्यन्त शब्द का भयवाचक समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास होता है, वह तत्पुरुषसमास है।

४४८- षष्ठ्यन्त का समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास होता है, वह तत्पुरुषसमास कहलाता है।

४४९- सप्तम्यन्त का शौण्ड आदि समर्थ सुबन्तों के साथ विकल्प से समास होता है, वह तत्पुरुष है।

द्वितीया श्रितातीत० आदि सूत्रों में द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, सप्तमी का योगविभाग करके शिष्टों के प्रयोगों को देखते हुए समर्थ द्वितीया आदि के साथ समास होता है, ऐसा समझना चाहिए।

४५०- समान विभक्ति वाले तत्पुरुष समास की कर्मधारयसंज्ञा होती है।

समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४५१. विशेषणं विशेष्येण बहुलम् २।१।५७॥**

समानविभक्तिकं विशेषणं समर्थेन विशेष्येण सह बहुलं समस्यते।

नीलोत्पलम्। निर्मलगुणाः। कृष्णचतुर्दशी। अखिलभूषणानि।

**वार्तिकम्- शाकपार्थिवादीनां सिद्धये उत्तरपदस्य लोपो वक्तव्यः।**

शाकप्रियः पार्थिवः शाकपार्थिवः। देवपूजको ब्राह्मणो देवब्राह्मणः।

सोपमानकर्मधारयसमासविधायकं विधिसूत्रम्

**४५२. उपमानानि सामान्यवचनैः २।१।५५॥**

उपमानवाचकानि सुबन्तानि समानाधिकरणैः सामान्यवचनैः सुबन्तैः सह समस्यन्ते। घन इव श्यामः- घनश्यामः। कर्पूर इव गौरः कर्पूरगौरः।

नञ्समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४५३. नञ् २।२।६॥**

नञ् सुपा सह समस्यते।

नकारलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**४५४. नलोपो नञः ६।३।७३॥**

उत्तरपदे परे नञो नस्य लोपो भवति । न ब्राह्मणः अब्राह्मणः।

नुडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**४५५. तस्मान्नुडचि ६।३।७४॥**

लुप्तनकारान्नञ उत्तरपदस्याजादेर्नुडागमो भवति। अनश्वः।

उपपदसमासविधायकं विधिसूत्रम्

**४५६. उपपदमतिङ् २।२।१९॥**

उपपदं सुबन्तं समर्थेन नित्यं समस्यते।

कुम्भं करोतीति कुम्भकारः। सूत्रं करोतीति सूत्रकारः।

४५१- समान विभक्ति वाले विशेषण का समर्थ विशेष्य के साथ बहुल से समास होता है।

वार्तिकार्थः- शाकपार्थिव जैसे शब्दों की सिद्धि के लिए उत्तरपद का लोप करना चाहिए।

४५२- उपमानवाचक सुबन्त का एकविभक्तिक सामान्यकथन वाले सुबन्त शब्दों के साथ समास होता है।

४५३- नञ् का समर्थ सुबन्त के साथ समास होता है।

४५४- उत्तरपद परे होने पर नञ् के नकार का लोप होता है।

४५५- लोप हो गया है नकार जिस नञ् का उससे परे अजादि को नुट् का आगम होता है।

४५६- उपपदसंज्ञक सुबन्त का समर्थ सुबन्त के साथ नित्य समास होता है।

टच्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४५७. राजाहःसखिभ्यष्टच् ५।४।९१॥**

राजाहःसख्यन्तेभ्यष्टज् भवति।

टिलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**४५८. नस्तद्धिते ६।४।१४४॥**

नान्तस्य भस्य टेर्लोपो भवति तद्धिते परे। योगिराजः। परमराजः।

परवल्लिङ्गविधायकं विधिसूत्रम्

**४५९. परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः २।४।२६॥**

द्वन्द्वतत्पुरुषयोः परपदस्येव लिङ्गं भवति।

अर्धपिप्पली। कुक्कुटमयूर्यौ। मयूरीकुक्कुटौ।

उभयलिङ्गविधायकं विधिसूत्रम्

**४६०. अर्धर्चाः पुंसि च २।४।३१॥**

अर्धर्चादिशब्दाः पुंसि क्लीबे च भवन्ति। अर्धचः, अर्धर्चम्।

एवं ध्वज-तीर्थ-शरीर-मण्डप-यूप-देहाङ्कुश-पात्र-सूत्रादयः।

**वार्तिकम्- सामान्ये नपुंसकम्।**

सामान्ये- समासेऽसमासे च कुत्रापि अनिर्धारिते लिङ्गे उत्सर्गतो नपुंसकं भवतीत्यर्थः। मृदु पचति। प्रातः कमनीयम्।

इति तत्पुरुषसमासप्रकरणम्।

---

४५७- राजन्, अहन् और सखि अन्त वाले शब्दों से समास के अन्त में टच्-प्रत्यय होता है।

४५८- नकारान्त भसंज्ञक टि का लोप होता है तद्धित के परे होने पर।

४५९- द्वन्द्व और तत्पुरुष समास में परपद का ही लिङ्ग हो।

४६०- अर्धर्च आदि गण में पठित शब्दों में पुँल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों होते हैं।

वार्तिकार्थः- लिङ्गविशेष की विवक्षा न होने पर समास, असमास कहीं भी सामान्यतया नपुंसकलिङ्ग होता है।

इति तत्पुरुषसमासप्रकरणम्।

# अथ बहुव्रीहि-समास-प्रकरणम्

अधिकारसूत्रम्

**४६१. शेषो बहुव्रीहिः २।२।२३॥**

द्वन्द्वात् पूर्वं बहुव्रीहिरधिक्रियते।

बहुव्रीहि-समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४६२. अनेकमन्यपदार्थे २।२।२४॥**

अनेकं प्रथमान्तमन्यस्य पदस्यार्थे वर्तमानं वा समस्यते, स बहुव्रीहिः। प्राप्तमुदकं यं स प्राप्तोदको ग्रामः। ऊढो रथो येन स ऊढरथोऽनड्वान्। उपहृतः पशुर्यस्मै स उपहृतपशुः। उद्धृतमोदनं यस्मात् तद् उद्धृतौदनं पात्रम्। पीतानि अम्बराणि यस्य स पीताम्बरो विष्णुः। वीराः पुरुषाः सन्ति यस्मिन् स वीरपुरुषको ग्रामः।

पुंवद्भावविधायकं विधिसूत्रम्

**४६३. स्त्रियाः पुंवद्भाषितपुंस्कादनूङ् समानाधिकरणे स्त्रियामपूरणी-प्रियादिषु ६।३।३४॥**

समानविभक्तिके स्त्रीलिङ्गशब्दे परे भाषितपुंस्कादनूङः स्त्रीवाचकस्य पुंवद्भावो भवति न तु पूरण्यां प्रियादौ च परतः।

ह्रस्वविधायकं विधिसूत्रम्

**४६४. गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य १।२।४८॥**

उपसर्जनसंज्ञकयोर्गोशब्द-स्त्रीप्रत्ययान्तप्रातिपदिकयोश्च ह्रस्वो भवति। रूपवती भार्या यस्य स रूपवद्भार्यः। दीर्घे जङ्घे यस्य स दीर्घजङ्घः। सुन्दरभार्यः।

**इति बहुव्रीहिसमासप्रकरणम्**

---

४६१- द्वन्द्व से पहले बहुव्रीहि का अधिकार है।

४६२- अन्यपद के अर्थ में विद्यमान एक से अधिक प्रथमान्त पद परस्पर विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, वह बहुव्रीहिसंज्ञक समास है।

४६३- समानविभक्तिक स्त्रीलिङ्ग वाला शब्द उत्तरपद में होने पर जिससे परे ऊङ्-प्रत्यय न किया गया हो ऐसे भाषितपुंस्क स्त्रीलिङ्ग को पुंवत्(पुंवद्भाव) हो जाता है किन्तु पूरणी-प्रत्यय और प्रिय आदि शब्दों के परे नहीं होता।

४६४- उपसर्जनसंज्ञक गोशब्द और उपसर्जनसंज्ञक स्त्रीलिङ्ग प्रातिपदिक को ह्रस्व होता है।

**इति बहुव्रीहिसमासप्रकरणम्**

# अथ द्वन्द्व-समास-प्रकरणम्

द्वन्द्व-समासविधायकं विधिसूत्रम्

**४६५. चार्थे द्वन्द्वः २।२।२९॥**

अनेकं सुबन्तं चार्थे वर्तमानं वा समस्यते, स द्वन्द्वः।

समुच्चयान्वाचयेतरेतरयोगसमाहाराश्चार्थाः।

तत्र 'ईश्वरं गुरुं च भजस्व' इति परस्परनिरपेक्षानेकस्यैकस्मिन्नन्वयः समुच्चयः।

'भिक्षाम् अट गां चानय' इत्यन्यतरस्यानुसङ्गिकत्वेनान्वयोऽन्वाचयः।

अनयोरसामर्थ्यात् समासो न भवति।

'धवखदिरौ छिन्धि' इति मिलितानामन्वय इतरेतरयोगः। रामकृष्णौ। रामकृष्णहरयः।

'हस्तचरणम्' इति समूहः समाहारः।

पूर्वप्रयोगविधायकं विधिसूत्रम्

**४६६. द्वन्द्वे घि २।२।३२॥**

द्वन्द्वे घिसंज्ञकस्य शब्दस्य पूर्वं प्रयोगो भवति।

हरिश्च हरश्च, हरिहरौ। हरिहरगुरवः।

---

४६५- अनेक सुबन्तों का च के अर्थ में विकल्प से समास होता है।

समुच्चय, अन्वाचय, इतरेतरयोग और समाहार ये चार्थ हैं।

'ईश्वरं गुरुं च भजस्व' जैसे प्रयोगों में परस्पर निरपेक्ष शब्दों का एक ही वाक्य में अन्वय हो जाना ही समुच्चय है।

'भिक्षाम् अट गां चानय' जैसे प्रयोगों में आनुषंगिक अर्थात् यह करो साथ में यह भी करो जैसा व्यवहार हो उसे अन्वाचय कहते हैं। इन दोनों में सामर्थ्य के अभाव में समास नहीं होता है।

'धवखदिरौ छिन्धि' जैसे प्रयोगों में जब अनेक पद एक ही क्रिया में, प्रत्येक रूप में अन्वित हो जाते हैं, तब इतरेतरयोग माना जाता है।

'हस्तचरणम्' जैसे प्रयोगों में जब समूह एकीभूत होकर क्रिया में अन्वित हो जाता है, तब समाहार माना जाता है।

४६६- द्वन्द्व-समास में घिसंज्ञक शब्द का पूर्व में प्रयोग होता है।

पूर्वप्रयोगविधायकं विधिसूत्रम्

## ४६७. अजाद्यदन्तम् २।२।३३॥

द्वन्द्वे यो शब्द अजादिरजन्तश्च तस्य पूर्वे प्रयोगो भवति।
ईशश्च कृष्णश्च ईशकृष्णौ।

पूर्वप्रयोगविधायकं विधिसूत्रम्

## ४६८. अल्पाच्तरम् २।२।३४॥

अल्पाच्तरं पदं द्वन्द्वे पूर्वं भवति।
शिवश्च केशवश्च शिवकेशवौ।

इति द्वन्द्वसमासप्रकरणम्।

---

४६७- द्वन्द्व-समास में जो शब्द अजादि भी हो और अदन्त भी, उसका पूर्व में प्रयोग होता है।

४६८- द्वन्द्व-समास में सबसे थोड़े अच् वाले शब्द का पूर्व में प्रयोग होता है।

इति द्वन्द्वसमासप्रकरणम्।

# अथ तद्धिताः

## तत्रादौ साधारणप्रत्ययाः

तद्धितसंज्ञासूत्रम् अधिकारसूत्रञ्च

**४६९. तद्धिताः ४।१।७६।।**

इत आरभ्य पञ्चमाध्यायसमाप्तिपर्यन्तं 'तद्धिताः' इति अधिक्रियते।

अधिकारसूत्रं द्वितीयम्

**४७०. समर्थानां प्रथमाद्वा ४।१।८२।।**

'प्राग्दिशो विभक्तिः' इत्यत् प्राक् समर्थानाम्, प्रथमाद्, वा इति पदत्रयम् अधिक्रियते।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४७१. अश्वपत्यादिभ्यश्च ४।१।८४।।**

अश्वपत्यादिगणपठितेभ्यः प्रातिपदिकेभ्योऽण्प्रत्ययो भवति, प्राग्दिव्यतीयेष्वर्थेषु।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**४७२. तद्धितेष्वचामादेः ७।२।११७।।**

ञिति णिति च तद्धिते प्रत्यये परे अचामादेरचो वृद्धिर्भवति।

वृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**४७३. किति च ७।२।११८।।**

किति तद्धिते प्रत्यये परे अचामादेरचो वृद्धिर्भवति।

..........

४६९- यहाँ से लेकर पञ्चमाध्याय की समाप्ति तक 'तद्धिताः' का अधिकार चलता है अर्थात् उन प्रत्ययों को तद्धित कहते हैं।

४७०- यहाँ से 'प्राग्दिशो विभक्तिः' तक समार्थानाम्, प्रथमाद्, वा इन तीन पदों का अधिकार चलता है।

४७१- प्राग्दिव्यतीय अर्थों में अश्वपति आदि गण में पठित प्रातिपदिकों से अण् प्रत्यय होता है।

४७२- ञित् या णित् तद्धित प्रत्यय के परे होने पर अचों में आदि अच् की वृद्धि होती है।

४७३- कित् तद्धित प्रत्यय के परे होने पर अचों में आदि अच् की वृद्धि होती है।

इवर्णावर्णयोर्लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**४७४. यस्येति च ६।४।१४८॥**

ईकारे तद्धिते च परे भस्येवर्णावर्णयोर्लोपो भवति। अश्वपतेरपत्यादि आश्वपतम्। गाणपतम्।

ण्यप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४७५. दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्यः ४।१।८५॥**

दिति-अदिति-आदित्यशब्देभ्यः पत्युत्तरपदाच्च प्राग्दीव्यतीयेष्वर्थेषु ण्य-प्रत्ययो भवति। अणोरपवादः। दितेरपत्यं दैत्यः।

यमो लोपविधायकं विधिसूत्रम्

**४७६. हलो यमां यमि लोपः ८।४।६४॥**

हलः परस्य यमो वा लोपो भवति यमि परे। इति यलोपः। अदितेरादित्यस्य वा अपत्यम्- आदित्यः। प्राजापत्यः।

इति तद्धितसाधारणप्रत्ययप्रकरणम्

---

४७४- ईकार या तद्धित के परे होने पर भसंज्ञक इवर्ण और अवर्ण का लोप होता है।

४७५- दिति, अदिति, आदित्य शब्द और पति उत्तरपद में हो ऐसे शब्दों से प्राग्दीव्यतीय अर्थों में 'ण्य' प्रत्यय होता है।

४७६- हल् से परे यम् का विकल्प से लोप होता है यम् के ही परे होने पर।

इति साधारणप्रत्ययप्रकरणम्।

# अथापत्याधिकारप्रकरणम्

तद्धितप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४७७. तस्यापत्यम् ४।१।९२॥**

षष्ठ्यन्तात्समर्थादपत्येऽर्थे उक्ता वक्ष्यमाणाश्च प्रत्यया भवन्ति।

गुणविधायकं विधिसूत्रम्

**४७८. ओर्गुणः ६।४।१४६॥**

भस्योकारस्य गुणो भवति तद्धिते।

उपगोरपत्यम् औपगवः। आश्वपतः। दैत्यः। प्राजापत्यः।

गोत्रसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**४७९. अपत्यं पौत्रप्रभृति गोत्रम् ४।१।१६२॥**

अपत्यत्वेन विवक्षितानां पौत्रादीनां गोत्रसंज्ञा भवति।

यञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४८०. गर्गादिभ्यो यञ् ४।१।१०५॥**

गोत्रापत्ये गर्गादिगणपठितेभ्यः प्रातिपदिकेभ्यो यञ् भवति।

गर्गस्य गोत्रापत्यं गार्ग्यः। वात्स्यः।

इञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४८१. अत इञ् ४।१।९५॥**

अपत्येऽर्थेऽदन्तात् प्रातिपदिकाद् इञ् भवति। दाक्षिः। दाशरथिः।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४८२. शिवादिभ्योऽण् ४।१।११२॥**

अपत्येऽर्थे शिवादिभ्य अण् भवति। शैवः। गाङ्गः।

---

४७७- षष्ठ्यन्त समर्थ शब्द से अपत्य अर्थ में कहे गये और कहे जाने वाले प्रत्यय होते हैं।

४७८- तद्धित प्रत्यय के परे होने पर उवर्ण को गुण होता है।

४७९- पौत्र आदि अपत्य की गोत्रसंज्ञा होती है।

४८०- गोत्रापत्य अर्थ में गर्ग आदि गणपठित शब्दों से यञ् प्रत्यय होता है।

४८१- अपत्य अर्थ में अदन्त प्रातिपदिक से इञ् प्रत्यय होता है।

४८२- अपत्य अर्थ में शिव आदि गणपठित शब्दों से अण् प्रत्यय होता है।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४८३. ऋष्यन्धक-वृष्णि-कुरुभ्यश्च ४।१।११४॥

ऋषिवाचकेभ्य अन्धक-वृष्णि-कुरुवंशवाचकेभ्यः प्रातिपदिकेभ्योऽण् भवति। वासिष्ठः। वैश्वामित्रः। श्वाफल्कः। वासुदेवः। नाकुलः। साहदेवः।

ढक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४८४. स्त्रीभ्यो ढक् ४।१।१२०॥

स्त्रीप्रत्ययान्तेभ्यः प्रातिपदिकेभ्यो ढक् भवति।

आयनाद्यादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ४८५. आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम् ७।१।२॥

प्रत्ययादेः फस्य आयन्, ढस्य एय्, खस्य ईन्, छस्य ईय्, घस्य इय् एते आदेशा भवन्ति। वैनतेयः। कौन्तेयः। राधेयः।

ठक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४६८. रेवत्यादिभ्यष्ठक् ४।१।१४६॥

रेवत्यादिभ्यष्ठक् प्रत्ययो भवति।

इकादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ४८७. ठस्येकः ७।३।५०॥

अङ्गात् परस्य ठस्य स्थाने इगादेशो भवति। रैवतिकः।

इत्यपत्याधिकारप्रकरणम्

---

४८३- ऋषिवाचक और अन्धक-वृष्णि-कुरुवंश वाचक प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है।

४८४- स्त्रीप्रत्ययान्त समर्थ प्रातिपदिक से ढक् प्रत्यय होता है।

४८५- प्रत्यय के आदि में स्थित फकार के स्थान पर आयन्, ढकार के स्थान पर एय्, खकार के स्थान पर ईन्, छकार के स्थान पर ईय् और घकार के स्थान पर इय् आदेश होते हैं।

४६८- रेवती आदि गणपठित समर्थ प्रातिपदिकों से ठक् प्रत्यय होता है।

४८७- अङ्ग से परे ठ प्रत्यय के स्थान पर इक् आदेश होता है।

इत्यपत्याधिकारप्रकरणम्।

# अथ रक्ताद्यर्थक-प्रकरणम्

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४८८. तेन रक्तं रागात् ४।२।१॥

तेन रक्तमित्यर्थे तृतीयान्ताद् रञ्जनद्रव्यवाचकादण् भवति।

कषायेण रक्तं वस्त्रं काषायम्।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४८९. सास्य देवता ४।२।२४॥

देवताविशेषवाचिनः प्रथमान्तात्समर्थात् 'सा अस्य देवता' इत्यर्थे अण्-प्रत्ययो भवति। इन्द्रो देवताऽस्येति ऐन्द्रं हविः। पाशुपतम्। बार्हस्पत्यम्।

निपातनसूत्रम्

## ४९०. पितृव्यमातुलमातामहपितामहाः ४।२।३६॥

एते शब्दा निपात्यन्ते। पितुर्भ्राता पितृव्यः। मातुर्भ्राता मातुलः।

मातुः पिता मातामहः। पितुः पिता पितामहः।

अणादिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४९१. तदधीते तद्वेद ४।२।५९।

तदधीते तद्वेदेत्यर्थेऽण् भवति।

ऐज्विधायक-वृद्धिनिषेधक-विधिसूत्रम्

## ४९२. न य्वाभ्यां पदान्ताभ्यां पूर्वौ तु ताभ्यामैच् ७।३।३॥

पदान्ताभ्यां यकारवकाराभ्यां परस्य न वृद्धिः, किन्तु ताभ्यां पूर्वौ क्रमाद् ऐचावागमौ भवति। व्याकरणमधीते वेद वा वैयाकरणः। व्याघ्रस्यापत्यं वैयाघ्रिः।

इति रक्ताद्यर्थकप्रकरणम्।

---

४८८- 'उससे रंगा हुआ' इस अर्थ में तृतीयान्त रंगने वाले द्रव्यवाचक शब्दों से अण् प्रत्यय होता है।

४८९- देवता-विशेष-वाचक प्रथमान्त समर्थ शब्दों से 'वह देवता है इसका' इस अर्थ में अण् प्रत्यय होता है।

४९०- पितृव्य, मातुल, मातामह और पितामह का निपातन किया जाता है।

४९१- 'उसे पढ़ता है' या 'उसे जानता है' इन अर्थों में द्वितीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय होता है।

४९२- पदान्त यकार वकार से परे अच् की वृद्धि नहीं होती किन्तु उनसे पूर्व के वर्णों को ऐच् अर्थात् ऐ, औ का आगम होता है।

इति रक्ताद्यर्थकप्रकरणम्।

# अथ चातुरार्थिक-प्रकरणम्

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४९३. तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि ४।२।६७।।**

तदस्मिन्नस्त्यर्थे प्रथमान्तात् प्रातिपदिकादण् भवति देशाभिधाने। उदुम्बराः सन्त्यस्मिन् देशे- औदुम्बरो देशः।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४९४. तेन निर्वृत्तम् ४।२।६८।।**

'तेन निर्वृत्तम्' इत्यस्मिन् अर्थे तृतीयान्तात् प्रातिपदिकात् अण् भवति देशाभिधाने। कुशाम्बेन निर्वृत्ता नगरी कौशाम्बी।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४९५. तस्य निवासः ४।२।६९।**

'तस्य निवासः' इत्यस्मिन् अर्थे षष्ठ्यन्तात् प्रातिपदिकात् अण् भवति देशाभिधाने। शिबीनां निवासो देशः शैबः।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**४९६. अदूरभवश्च ४।२।७०।**

'अदूरभवः' इत्यस्मिन् अर्थे षष्ठ्यन्तात् प्रातिपदिकात् अण् भवति देशाभिधाने। विदिशाया अदूरभवं नगरं वैदिशम्।

इति चातुरार्थिकप्रकरणम्।

---

४९३- 'वह इस देश में है' इस अर्थ में प्रथमान्त प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय होता है यदि प्रकृति और प्रत्यय के समूह से देश का नाम बनता हो तो।

४९४- 'बनाया गया या बसाया गया' इस अर्थ में तृतीयान्त प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय होता है यदि प्रकृति और प्रत्यय के समूह से देश का नाम बनता हो तो।

४९५- 'उसका निवास' इस अर्थ में षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय होता है यदि प्रकृति और प्रत्यय के समूह से देश का नाम बनता हो तो।

४९६- 'समीप में रहने वाला देश' इस अर्थ में षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय होता है यदि प्रकृति और प्रत्यय के समूह से देश का नाम बनता हो तो।

इति चातुरार्थिकप्रकरणम्।

# अथ शैषिक-प्रकरणम्

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्, अधिकारसूत्रञ्च

## ४९७. शेषे ४।२।९२॥

अपत्यादिचातुरार्थिकान्तादन्योऽर्थः शेषस्तत्राणादयो भवन्ति। चक्षुषा गृह्यते चाक्षुषं रूपम्। श्रवणेन गृह्यते श्रावणः शब्दः। उपनिषदि ज्ञातः औपनिषदः पुरुषः। दृषदि पिष्टा दार्षदाः सक्तवः। चतुर्भिरुह्यते चातुरं शकटम्। चतुर्दश्यां दृश्यते चातुर्दशं रक्षः। 'तस्य विकारः' इत्यतः प्राक् शेषाधिकारः।

घ-ख-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४९८. राष्ट्रावारपाराद् घखौ ४।२।९३॥

राष्ट्र-अवारपारशब्दाभ्यां यथासंख्येन घखौ प्रत्ययौ भवतः। राष्ट्रे जातादि राष्ट्रियः। अवारपारीणः।

**वार्तिकम्- अवारपाराद्विगृहीतादपि विपरीताच्चेति वक्तव्यम्।**

अवारीणः। पारीणः। पारावारीणः।

य-खञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ४९९. ग्रामाद्यखञौ ४।२।९४॥

ग्रामशब्दाद् यखञौ प्रत्ययौ भवतः शेषे। ग्राम्यः, ग्रामीणः।

ढक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ५००. नद्यादिभ्यो ढक् ४।२।९७॥

नद्यादिगणपठितेभ्यो ढक्-प्रत्ययो भवति। नादेयम्। माहेयम्। वाराणसेयम्।

---

४९७- अपत्याधिकार से चातुरार्थिक तक के सभी अर्थों से भिन्न जो अर्थ, उसे शेष कहते हैं, शेष में अण् आदि प्रत्यय होते हैं।

४९८- शेष अर्थ में राष्ट्र और अवारपार शब्द से क्रमेण घ और ख प्रत्यय होते हैं।

वार्तिकार्थ- अवारपार शब्द से पृथक् होने व विपरीत होने पर भी ख प्रत्यय होता है।

४९९- शेष अर्थ में ग्राम-शब्द से य और खञ् प्रत्यय होते हैं।

५००- शेष अर्थ में नदी आदि गणपठित शब्दों से ढक् प्रत्यय होता है।

यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५०१. द्युप्रागपागुदक्प्रतीचो यत् ४।२।१०१॥**

दिव्-प्राच्-अपाच्-उदीच्-प्रतीच्-शब्देभ्यो यत्-प्रत्ययो भवति शेषे।

दिव्यम्। प्राच्यम्। अपाच्यम्। उदीच्यम्। प्रतीच्यम्।

त्यप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५०२. अव्ययात्त्यप् ४।२।१०४॥**

अमा-इह-क्व-नि-तसि-त्रेभ्योऽव्ययेभ्यस्त्यप्-प्रत्ययो भवति शेषे।

अमात्यः। इहत्यः। क्वत्यः। ततस्त्यः। तत्रत्यः। नित्यः।

वृद्धसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**५०३. वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद् वृद्धम् १।१।७३॥**

यस्य समुदायस्याचां मध्ये आदिर्वृद्धिस्तस्य वृद्धसंज्ञा भवति.

वृद्धसंज्ञाविधायकं द्वितीयं संज्ञासूत्रम्

**५०४. त्यदादीनि च १।१।७४॥**

त्यदादीनि वृद्धसंज्ञकानि भवन्ति।

छ-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५०५. वृद्धाच्छः ४।२।११४॥**

वृद्धसंज्ञकात् प्रातिपदिकात् छ-प्रत्ययो भवति शेषे।

शालीयः। मालीयः। तदीयः।

**वार्तिकम्- वा नामधेयस्य वृद्धसंज्ञा वक्तव्या। देवदत्तीयः, दैवदत्तः।**

खञ्-छ-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५०६. युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च ४।३।१॥**

युष्मदस्मद्भ्यां वा खञ् छश्च भवतः। पक्षे अण्।

..............................................................................................................

५०१- दिव्, प्राञ्च्, अपाञ्च्, उदञ्च् और प्रत्यञ्च् से शैषिक अर्थों में यत्-प्रत्यय होता है।

५०२- शेष अर्थ में अमा, इह, क्व, नि, तसिल्-प्रत्ययान्त और त्रल्-प्रत्ययान्त अव्ययों से त्यप्-प्रत्यय होता है।

५०३- जिस शब्द के अचों में आदि अच् यदि वृद्धिसंज्ञक हो तो उस शब्द की वृद्धसंज्ञा होती है।

५०४- त्यदादि की भी वृद्धसंज्ञा होती है।

५०५- वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक से शेप अर्थों में छ प्रत्यय हांता है।

वार्तिकार्थः- नामवाचक शब्दों की विकल्प से वृद्धसंज्ञा होती है।

५०६- युष्मद् और अस्मद् शब्द से विकल्प से खञ् और छ ये दो प्रत्यय होते हैं।

युष्माकास्माकादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५०७. तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ ४।३।२।।**

खञि अणि च युष्मदस्मदोः स्थाने युष्माकास्माकौ आदेशौ भवतः।

तवक-ममकादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५०८. तवकममकावेकवचने ४।३।३।।**

एकवचनविषये युष्मदस्मदोः स्थाने तवक-ममकौ आदेशौ भवतः, खञि अणि च।

त्व-मावादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५०९. प्रत्ययोत्तरपदयोश्च ७।२।९८।।**

मपर्यन्तयोर्युष्मदस्मदोः स्थाने त्वमौ आदेशौ भवतः, प्रत्यये उत्तरपदे च परतः।

युष्मदीयः, यौष्माकीणः, यौष्माकः, तावकीनः, तावकः, त्वदीयः।

अस्मदीयः, आस्माकीनः, आस्माकः, मामकीनः, मामकः, मदीयः।

कालवाचकेभ्यष्ठञ्-विधायकं विधिसूत्रम्

**५१०. कालाट्ठञ् ४।३।११।।**

कालवाचकेभ्यः प्रातिपदिकेभ्यष्ठञ् भवति।

कालिकम्। मासिकम्। सांवत्सरिकम्।

**वार्तिकम्- अव्ययानां भमात्रे टिलोपः।** सायम्प्रातिकः। पौनःपुनिकः।

जातेऽर्थेऽणादिविधायकं विधिसूत्रम्

**५११. तत्र जातः ४।३।२५।।**

सप्तम्यन्तात् समर्थाज्जात इत्यर्थेऽणादयो घादयश्च भवन्ति।

स्रुघ्ने जातः स्रौघ्नः। उत्से जातः औत्सः। राष्ट्रे जातः राष्ट्रियः।

अवारपारे जातः अवारपारीणः।

..................................................................................................

५०७- खञ् और अण् के परे होने पर युष्मद् और अस्मद् शब्द के स्थान पर युष्माक और अस्माक आदेश होते हैं।

५०८- एकवचन का विपय होने पर युष्मद् और अस्मद् शब्द के स्थान पर तवक और ममक आदेश होते हैं।

५०९- युष्मद् और अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग के स्थान पर क्रमशः त्व और म आदेश होते हैं, प्रत्यय या उत्तरपद परे होने पर।

५१०- कालवाचक प्रातिपदिक से ठक् प्रत्यय होता है।

वार्तिकार्थः- अव्ययों में भसंज्ञा मात्र से टि का लोप होता है।

५११- सप्तम्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से 'उसमें उत्पन्न हुआ' अर्थ में अण् आदि और घ आदि प्रत्यय होते हैं।

प्रायभवेऽर्थेऽणादिविधायकं विधिसूत्रम्

**५१२. प्रायभवः ४।३।३९॥**

सप्तम्यन्तात् समर्थात् 'प्रायभवः' इत्यर्थेऽणादयो घादयश्च भवन्ति। स्रुघ्ने प्राणेण भवति स्रौघ्नः।

तत्र भवेऽर्थेऽणादिविधायकं विधिसूत्रम्

**५१३. तत्र भवः ४।३।५३॥**

सप्तम्यन्तात् समर्थात् 'तत्र भवः' इत्यर्थेऽणादयो घादयश्च भवन्ति। स्रुघ्ने भवः स्रौघ्नः।

यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५१४. शरीरावयवाच्च ४।३।५५॥**

शरीरावयववाचकात् पञ्चम्यन्तात् समर्थात् 'तत्र भवः' इत्यर्थे यत्-प्रत्ययो भवति। दन्त्यम्। कण्ठ्यम्।

वार्तिकम्- अध्यात्मादेष्ठञ् इष्यते। अध्यात्मं भवम् आध्यात्मिकम्।

छ-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५१५. जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः ४।३।६२॥**

जिह्वामूलाद् अङ्गुल्याश्च छ-प्रत्ययो भवति। जिह्वामूलीयम्। अङ्गुलीयम्।

छ-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५१६. वर्गान्ताच्च ४।३।६३॥**

वर्गान्तात् शब्दात् छ-प्रत्ययो भवति। कवर्गीयम्। चवर्गीयम्।

---

५१२- सप्तम्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से 'प्रायः होने वाला' अर्थ में अण् आदि और घ आदि प्रत्यय होते हैं।

५१३- सप्तम्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से 'वहाँ होने वाला' अर्थ में अण् आदि और घ आदि प्रत्यय होते हैं।

५१४- शरीर के अवयव वाचक पञ्चम्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से 'वहाँ होने वाला' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है।

वार्तिकार्थः- अध्यात्म आदि शब्दों से ठञ् होता है।

५१५- जिह्वामूल और अङ्गुली शब्द से छ प्रत्यय होता है।

५१६- वर्ग-शब्द अन्त में हो ऐसे शब्दों से छ प्रत्यय होता है।

अणादिविधायकं विधिसूत्रम्

**५१७. तत आगतः ४।३।७४॥**

पञ्चम्यन्तात् प्रातिपदिकात् 'तत आगतः' इत्यर्थेऽणादयो भवन्ति।

स्रुघ्नादागतः स्रौघ्नः। मथुराया आगतो माथुरः।

वुञ्-विधायकं विधिसूत्रम्

**५१८. विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यो वुञ् ४।३।७७॥**

विद्यासम्बन्धेभ्यो योनिसम्बन्धेभ्यश्च वुञ् भवति। औपाध्यायकः। पैतामहकः।

अणादिविधायकं विधिसूत्रम्

**५१९. प्रभवति ४।३।८३॥**

पञ्चम्यन्तात् प्रातिपदिकात् 'ततः प्रभवति' इत्यर्थेऽणादयो भवन्ति।

हिमवतः प्रभवति हैमवती गङ्गा।

अणादिविधायकं विधिसूत्रम्

**५२०. अधिकृत्य कृते ग्रन्थे ४।३।८७॥**

द्वितीयान्तात् प्रातिपदिकाद् 'अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' इत्यर्थेऽणादयो भवन्ति।

शारीरकम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः शारीरकीयः।

शकुन्तलाम् अधिकृत्य कृतं नाटकं शाकुन्तलम्।

अणादिविधायकं विधिसूत्रम्

**५२१. सोऽस्य निवासः ४।३।८९॥**

'सोऽस्य निवासः' इत्यस्मिन्नर्थे प्रथमान्तात् प्रातिपदिकाद् अणादयो भवन्ति।

स्रुघ्नो निवासोऽस्य स्रौघ्नः।

---

५१७- पञ्चम्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से 'वहाँ से आया हुआ' इस अर्थ में अण् आदि और घ आदि प्रत्यय होते हैं।

५१८- विद्यासम्बन्ध और योनिसम्बन्ध वाले पञ्चम्यन्त प्रातिपदिकों से 'तत आगतः' अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है।

५१९- पञ्चम्यन्त प्रातिपदिक से वहाँ से 'दिखाई देता है' अर्थ में अण् आदि प्रत्यय होते हैं।

५२०- द्वितीयान्त प्रातिपदिक से 'आधार मानकर बनाया गया ग्रन्थ' अर्थ में अण् आदि प्रत्यय होते हैं।

५२१- 'वह इसका निवास है' इस अर्थ में प्रथमान्त प्रातिपदिक से अण् आदि प्रत्यय होते हैं।

अणादिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२२. तेन प्रोक्तम् ४।३।१०१॥**

'तेन प्रोक्तम्' इत्यर्थे तृतीयान्तात् प्रातिपदिकाद् अणादयो भवन्ति। पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम्। चन्द्रेण प्रोक्तं चान्द्रम्।

अणादिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२३. तस्येदम् ४।३।१२०॥**

'तस्य इदम्' इत्यर्थे षष्ठ्यन्तात् प्रातिपदिकाद् अणादयो भवन्ति। भगवतः इदम्- भागवतम्।

इति शैषिकप्रकरणम्।

---

५२२- 'उसके द्वारा कहा गया' इस अर्थ में तृतीयान्त प्रातिपदिक से अण् आदिप्रत्यय होते हैं।

५२३- 'उसका है यह' इस अर्थ में षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से अण् आदि प्रत्यय होते हैं।

इति शैषिकप्रकरणम्।

# अथ विकारार्थक-प्रकरणम्

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२४. तस्य विकारः ४।३।१३४॥**

'तस्य विकारः' इत्यर्थे षष्ठ्यन्तात् प्रातिपदिकाद् अणादयो भवन्ति।

**वार्तिकम्- अश्मनो विकारे टिलोपो वक्तव्यः।**

अश्मनो विकारः आश्मः। भास्मनः। मार्त्तिकः।

अण्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२५. अवयवे च प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः ४।३।१३५॥**

अवयवे विकारे चार्थे षष्ठ्यन्तेभ्यः प्राण्योषधिवृक्षवाचकेभ्यः प्रातिपदिकेभ्योऽणादयो भवन्ति।

मयूरस्यावयवो विकारो वा मायूरः। मौर्वं काण्डं भस्म वा। पैप्पलम्।

मयट्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२६. गोश्च पुरीषे ४।३।१४५॥**

गो-शब्दात् पुरीषेऽर्थे मयट् भवति। गोः पुरीषं गोमयम्।

यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२७. गोपयसोर्यत् ४।३।१६०॥**

विकारेऽवयवे चार्थे गोशब्दात् पयस्-शब्दाच्च यत्-प्रत्ययो भवति।
गव्यम्। पयस्यम्।

इति विकारार्थकप्रकरणम्।

---

५२४- 'उसका विकार' इस अर्थ में षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से अण् आदि प्रत्यय होते हैं।

वार्तिकार्थ- विकारार्थक प्रत्यय के परे अश्मन् में टि का लोप होता है।

५२५- अवयव और विकार अर्थ में षष्ठ्यन्त प्राणी, औषधी और वृक्षवाचक प्रातिपदिकों से अण् आदि प्रत्यय होते हैं।

५२६- गोशब्द से पुरीष अर्थ में मयट् प्रत्यय होता है।

५२७- विकार और अवयव अर्थ में गो शब्द और पयस् शब्द से यत् प्रत्यय होता है।

इति विकारार्थकप्रकरणम्।

# अथ ठगधिकार-प्रकरणम्

ठक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२८. संस्कृतम् ४।४।३।।**

'तेन संस्कृतम्' इत्यर्थे तृतीयान्तात् प्रातिपदिकाद् ठक्-प्रत्ययो भवति।

दध्ना संस्कृतम्- दाधिकम्। मारीचिकम्।

ठक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५२९. तरति ४।४।५।।**

'तेन तरति' इत्यर्थे तृतीयान्तात् प्रातिपदिकाद् ठक्-प्रत्ययो भवति।

उडुपेन तरति- औडुपिकः।

ठक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३०. चरति ४।४।८।।**

तृतीयान्तात् प्रातिपदिकात् गच्छति, भक्षयतीत्यर्थयोष्ठक्।

हस्तिना चरति हास्तिकः। दध्ना चरति दाधिकः।

ठक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३१. रक्षति ४।४।३३।।**

'तं रक्षति' इत्यर्थे द्वितीयान्तात् प्रातिपदिकात् ठक्।

समाजं रक्षति सामाजिकः।

---

५२८- 'उससे संस्कार किया गया' इस अर्थ में तृतीयान्त प्रातिपदिक से ठक् प्रत्यय होता है।

५२९- 'उससे तरता है' इस अर्थ में तृतीयान्त प्रातिपदिक से ठक् प्रत्यय होता है।

५३०- तृतीयान्त प्रातिपदिक से चरति= जाता है, खाता है अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है।

५३१- 'उसकी रक्षा करता है' इस अर्थ में द्वितीयान्त प्रातिपदिक से ठक् प्रत्यय होता है।

ठक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३२. धर्मं चरति ४।४।४१॥**

'धर्मं चरति' इत्यर्थे द्वितीयान्तात् प्रातिपदिकात् ठग् भवति।

धर्मं चरति धार्मिकः।

ठक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३३. शीलम् ४।४।६१॥**

'शीलमस्य' इत्यर्थे प्रथमान्तात् प्रातिपदिकात् ठग् भवति।

अपूपभक्षणं शीलमस्य आपूपिकः।

इति ठगधिकारप्रकरणम्।

........................................................................................................

५३२- 'धर्म का आचरण करता है' इस अर्थ में द्वितीयान्त धर्म शब्द से ठक् प्रत्यय होता है।

५३३- 'शील है इसका' इस अर्थ में प्रथमान्त प्रातिपदिक से ठक् प्रत्यय होता है।

इति ठगधिकारप्रकरणम्।

# अथ यदधिकार-प्रकरणम्

यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३४. तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम् ४।४।७६॥**

द्वितीयान्तरथ-युग-प्रासङ्गशब्देभ्य वहत्यर्थे यत्-प्रत्ययो भवति।
रथं वहति रथ्यः। युग्यः। प्रासङ्ग्यः।

यत्-ढक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३५. धुरो यड्ढकौ ४।४।७७॥**

द्वितीयान्ताद् धुर्-शब्दाद् वहत्यर्थे यत्-ढक्-प्रत्ययौ भवतः।
धुर्यः। धौरेयः।

यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३६. नौ-वयो-धर्म-विष-मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य-तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्य-सम-समित-सम्मितेषु ४।४।९१॥**

तृतीयान्तेभ्यो नावादिभ्यस्तार्याद्यर्थे यत्प्रत्ययो भवति।
नावा तार्यं नाव्यम्। वयसा तुल्यो वयस्यः। धर्मेण प्राप्यं धर्म्यम्।
विषेण वध्यो विष्यः। मूलेन आनाम्यं मूल्यम्। मूलेन समो मूल्यः।
सीतया समितं सीत्यं क्षेत्रम्। तुलया सम्मितं तुल्यम्।

यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३७. तत्र साधुः ४।४।९८॥**

सप्तम्यन्तात् प्रातिपदिकात् 'तत्र साधुः' इत्यर्थे यत्-प्रत्ययो भवति।
अग्रे साधुः अग्र्यः। सभ्यः। शरण्यः। कर्मण्यः।

इति यदधिकारप्रकरणम्।

---

५३४- 'वह वहन करता है' (ढोता है) इस अर्थ में द्वितीयान्त प्रातिपदिक रथ, युग और प्रासङ्ग शब्दों से यत् प्रत्यय होता है।

५३५- 'वह वहन करता है' इस अर्थ में द्वितीयान्त प्रातिपदिक धुर्-शब्द से यत् प्रत्यय होता है।

५३६- तृतीयान्त नौ, वयस्, धर्म, विष, मूल, मूल, सीता और तुला शब्दों से क्रमशः तारने योग्य, तुल्य, प्राप्य, वध्य, प्राप्त होने वाला लाभ, सम, एक समान करना और तौलना अर्थ में यत् प्रत्यय होता है।

५३७- सप्तम्यन्त प्रातिपदिक से साधु, कुशल, प्रवीण, योग्य अर्थ में यत् प्रत्यय होता है।



इति यदधिकारप्रकरणम्।

# अथ छयतोरधिकार-प्रकरणम्

छ-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३८. तस्मै हितम् ५।१।५॥**

तस्मै हितम् इत्यर्थे चतुर्थ्यन्तात् प्रातिपदिकात् छ-प्रत्ययो भवति। वत्सेभ्यो हितम्- वत्सीयो गोधुक्।

छ-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५३९. शरीरावयवाद्यत् ५।१।६॥**

'तस्मै हितम्' इत्यर्थे चतुर्थ्यन्तात् शरीरावयववाचकात् प्रातिपदिकाद् यत्-प्रत्ययो भवति। दन्त्यम्। कण्ठ्यम्। नस्यम्।

इति छयतोरधिकार-प्रकरणम्।

..........................................................................................

५३८- 'उसके लिए हित' अर्थ में चतुर्थ्यन्त प्रातिपदिक से छ प्रत्यय होता है।

५३९- 'उसका हित' इस अर्थ में चतुर्थ्यन्त प्रातिपदिक से छ प्रत्यय होता है।

इति छयतोरधिकारप्रकरणम्।

# अथ ठञधिकार-प्रकरणम्

ठञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४०. तेन क्रीतम् ५।१।३७॥**

'तेन क्रीतम्' इत्यर्थे तृतीयान्तात् प्रातिपदिकात् ठञ् भवति।

सप्तत्या क्रीतम् साप्ततिकम्। प्रास्थिकम्।

ठञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४१. तस्येश्वरः ५।१।४२॥**

'तस्येश्वरः' इत्यर्थे षष्ठ्यन्तसर्वभूमिपृथिवीभ्यामणञौ भवतः।

उभयपदवृद्धिविधायकं विधिसूत्रम्

**५४२. अनुशतिकादीनाञ्च ७।३।२०॥**

अनुशतिकादीनामुभयपदवृद्धिर्भवति ञिति णिति किति च।

सर्वभूमेरीश्वरः सार्वभौमः। पार्थिवः।

निपातनार्थं विधिसूत्रम्

**५४३. पङ्क्ति-विंशति-त्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशत्षष्टिसप्तत्य-शीतिनवतिशतम् ५।१।५९॥**

एते रूढशब्दा निपात्यन्ते।

---

५४०- 'उससे खरीदा गया' इस अर्थ में तृतीयान्त प्रातिपदिक से ठञ् होता है।

५४१- 'उसका स्वामी' अर्थ में षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक सर्वभूमि और पृथिवी शब्द से अण् और अञ् प्रत्यय होते हैं।

५४२- अनुशतिक आदि गण में पठित शब्दों में पूर्वपद और उत्तरपद अर्थात् दोनों पदों की वृद्धि होती है।

५४३- पङ्क्ति, विंशति, त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्, षष्टि, सप्तति, अशीति, नवति और शतम् इन रूढ-शब्दों का निपातन होता है।

ठञादिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४४. तदर्हति ५।१।६३॥**

'लब्धुं योग्यो भवति' इत्यर्थे द्वितीयान्तात् प्रातिपदिकाट्ठञादयो भवन्ति।
छत्रमर्हति छात्रिकः। चामरिकः।

यत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४५. दण्डादिभ्यो यत् ५।१।६६॥**

तदर्हतीत्यर्थे दण्डादिगणपठितेभ्यो यत्-प्रत्ययो भवति।
दण्डमर्हति दण्ड्यः। अर्घ्यः। वध्यः।

ठञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४६. तेन निर्वृत्तम् ५।१।७९॥**

'तेन निर्वृत्तम्' इत्यर्थे तृतीयान्तात् प्रातिपदिकात् ठञ् भवति।
मासेन निर्वृत्तम्- मासिकम्।

इति ठञधिकार-प्रकरणम्।

---

५४४- 'वह पाने योग्य है' अर्थ में द्वितीयान्त प्रातिपदिक शब्दों से ठञ् आदि प्रत्यय होते है।

५४५- 'वह पाने योग्य' अर्थ में दण्डादि गणपठित द्वितीयान्त प्रातिपदिक शब्दों से यत्-प्रत्यय होता है।

५४६- 'उससे बनाया गया' अर्थात् 'सम्पन्न किया गया' अर्थ में तृतीयान्त प्रातिपदिक से ठञ् हांता है।

इति ठञधिकारप्रकरणम्।

# अथ त्वतलोरधिकार-प्रकरणम्

वति-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४७. तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः ५।१।११५॥**

'तेन तुल्यम्' इत्यर्थे तृतीयान्तात् प्रातिपदिकाद् वतिप्रत्ययो भवति, क्रियातुल्ये। ब्राह्मणवद् अधीते।

वति-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४८. तत्र तस्येव ५।१।११६॥**

सप्तम्यन्तात् प्रातिपदिकात् 'तस्येव' इत्यर्थे वति-प्रत्ययो भवति।
मथुरायामिव मथुरावत् अयोध्यायां प्राकाराः।

त्व-तल्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५४९. तस्य भावस्त्वतलौ ५।१।११९॥**

'तस्य भावः' इत्यर्थे षष्ठ्यन्तात् प्रातिपदिकात् त्व-प्रत्ययस्तल्-प्रत्ययश्च भवतः। त्वप्रत्ययान्तं नपुंसके, तलन्तं स्त्रियाम्।
गोर्भावो गोत्वं-गोता। घटस्य भावो घटत्वं-घटता।

ष्यञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५५०. गुणवचन-ब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च ५।१।१२४॥**

गुणवाचकेभ्यो ब्राह्मणादिगणपठितेभ्यो भावे कर्मणि च ष्यञ् प्रत्ययो भवति।

---

५४७- 'उससे तुल्य' इस अर्थ में तृतीयान्त प्रातिपदिक से वति प्रत्यय होता है किन्तु तुल्यता क्रिया से होनी चाहिए।

५४८- 'उसके सदृश' इस अर्थ में सप्तम्यन्त और षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से वति प्रत्यय होता है।

५४९- 'उसका भाव' इस अर्थ में षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से त्व और तल् प्रत्यय होते हैं।

५५०- गुणवाचक शब्द और ब्राह्मणादि गणपठित षष्ठ्यन्त प्रातिपदिकों से भाव या कर्म अर्थ में ष्यञ् प्रत्यय होता है।

षकारेत्संज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

**५५१. षः प्रत्ययस्य १।३।६॥**

प्रत्ययस्यादिः षकार इत्संज्ञको भवति।

मूढस्य भावः कर्म वा मौढ्यम्। जडस्य भावः कर्म वा जाड्यम्। ब्राह्मण्यम्। ब्राह्मणादिराकृतिगणः।

यक्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५५२. पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक् ५।१।१२८॥**

पतिशब्दान्तेभ्यः पुरोहितादिगणपठितेभ्यश्च षष्ठ्यन्तप्रातिपदिकेभ्यो भावे कर्मणि च यक्-प्रत्ययो भवति। सैनापत्यम्। पौरोहित्यम्।

इति त्वतलोरधिकार-प्रकरणम्।

---

५५१- प्रत्यय के आदि में स्थित षकार की इत्संज्ञा होती है।

५५२- पतिशब्दान्त या पुरोहितादि गणपठित षष्ठ्यन्त प्रातिपदिकों से भाव और कर्म अर्थ में यक् प्रत्यय होता है।

इति त्वतलोरधिकारप्रकरणम्।

# अथ भवनाद्यर्थक-प्रकरणम्

खञ्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५५३. धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् ५।२।१॥**

धान्यानां भवने क्षेत्रेऽर्थे षष्ठ्यन्तेभ्यो धान्यविशेषवाचिभ्यः प्रातिपदिकेभ्यः खञ्-प्रत्ययो भवति। मुद्गानां भवनं क्षेत्रं मौद्गीनम्। गौधूमीनम्।

इतच्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५५४. तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् ५।२।३६॥**

तदस्य सञ्जातमित्यर्थे तारकादिगणपठितेभ्यः प्रथमान्तेभ्य इतच्-प्रत्ययो भवति। तारकाः सञ्जाता अस्य तारकितं नभः।

सदसद्विवेकिनी बुद्धिः पण्डा, सा सञ्जाता अस्येति पण्डितः।

तयप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५५५. सङ्ख्याया अवयवे तयप् ५।२।४२॥**

अवयवे वर्तमानात् सङ्ख्यावाचकात् प्रथमान्तात् तदस्येत्यर्थे तयप्-प्रत्ययो भवति। पञ्च अवयवा अस्य पञ्चतयम्।

अयजादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५५६. द्वित्रिभ्यां तयस्यायज्वा ५।२।४३॥**

द्वित्रिभ्यां परस्य तयस्य स्थानेऽयजादेशो वा भवति।

द्वितयम्, द्वयम्। त्रितयम्, त्रयम्।

---

५५३- 'धान्यों का उत्पत्तिस्थान क्षेत्र आदि' अर्थ में षष्ठ्यन्त धान्यवाचक शब्दों से खञ् होता है।

५५४- 'ऐसा हो गया है इसका' इस अर्थ में तारकादि गणपठित प्रथमान्त प्रातिपदिकों से इतच् प्रत्यय होता है।

५५५- अवयव अर्थ में विद्यमान सङ्ख्यावाचक प्रथमान्त से 'वह इसका अवयव' अर्थ में तयप् प्रत्यय होता है।

५५६- द्वि और त्रि शब्द से परे तयप् के स्थान पर अयच् आदेश होता है।

पूरणार्थे डट्प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५५७. तस्य पूरणे डट् ५।२।४८।।**

सङ्ख्यावाचकात् षष्ठ्यन्तात् पूरणेऽर्थे डट्-प्रत्ययो भवति।

एकादशानां पूरणः- एकादशः। द्वादशः।

मडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**५५८. नान्तादसङ्ख्यादेर्मट् ५।२।४९।।**

असङ्ख्यादेर्नकारात् पूरणार्थे डटो मडागमो भवति। पञ्चानां पूरणः पञ्चमः।

तमडागमविधायकं विधिसूत्रम्

**५५९. विंशत्यादिभ्यस्तमडन्यतरस्याम् ५।२।५६।।**

विंशत्यादिभ्यः परस्य डटस्तमडागमो वा भवति।

तिलोपविधायकं विधिसूत्रम्

**५६०. तिविंशतेर्डिति ६।४।१४२।।**

विंशतेर्भस्य तिशब्दस्य लोपो डिति परे। विंशतितमः, विंशः। त्रिंशत्तमः, त्रिंशः। पञ्चाशत्तमः, पञ्चाशः।

थुगागमविधायकं विधिसूत्रम्

**५६१. षट्कतिकतिपयचतुरां थुक् ५।२।५१।।**

षष्-कति-कतिपय-चतुःशब्दानां थुगागमो भवति, डिति परे।

षण्णां पूरणः षष्ठः। कतिथः। कतिपयथः। चतुर्थः।।

.........................................................................................................

५५७- सङ्ख्यावाचक षष्ठ्यन्त से पूरण अर्थ में डट् प्रत्यय होता है।

५५८- जिसके आदि में कोई सङ्ख्याशब्द न हो ऐसे नकारान्त सङ्ख्यावाचक प्रातिपदिक से परे डट् को मट् का आगम होता है।

५५९- विंशति आदि से परे डट् को तमड् आगम होता है।

५६०- विंशति के भसंज्ञक तिशब्द का लोप होता है डित् परे होने पर।

५६१- षष्, कति, कतिपय और चतुर् शब्दों को थुक् आगम होता है, डित् के परे होने पर।

तीयप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५६२. द्वेस्तीयः ५।२।५४॥**

द्विशब्दात् पूरणेऽर्थे तीय-प्रत्ययो भवति। द्वितीयः।

तीय-सम्प्रसारणञ्च विधायकं विधिसूत्रम्

**५६३. त्रेः सम्प्रसारणञ्च ५।२।५५॥**

त्रिशब्दात् तीय-प्रत्ययो रेफस्य स्थाने सम्प्रसारणसंज्ञक-ऋकारादेशश्च भवति। सम्प्रसारणाच्चेति पूर्वरूपम्। तृतीयः।

इति भवनाद्यर्थकप्रकरणम्।

..............................................................................................................

५६२- द्विशब्द से पूरण अर्थ में तीय प्रत्यय होता है।

५६३- त्रिशब्द से पूरण अर्थ में तीय प्रत्यय और रेफ के स्थान पर सम्प्रसारणसंज्ञक ऋकार आदेश होता है।

इति भवनाद्यर्थकप्रकरणम्।

# अथ मत्वर्थीय-प्रकरणम्

मतुप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ५६४. तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् ५।२।९४॥

तदस्यास्ति तदस्मिन्नस्तीत्यर्थे प्रथमान्तात् प्रातिपदिकात् वा मतुप्-प्रत्ययो भवति। गावोऽस्यास्मिन् वा सन्तीति गोमान्।

वकारादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ५६५. मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः ८।२।९॥

मवर्णावर्णान्तान्मवर्णावर्णोपधाच्च यवादिवर्जितात् परस्य मतोर्मकारस्य स्थाने वकारादेशो भवति। गुणवान्। विद्यावान्। लक्ष्मीवान्। यशस्वान्।

इनि-ठन्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ५६६. अत इनिठनौ ५।२।११५॥

अदन्तात् प्रथमान्तात् प्रातिपदिकात् मत्वर्थे वा इनिठनौ भवतः। दण्डी, दण्डिकः। छत्री, छत्रिकः।

विनिप्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ५६७. अस्मायामेधास्रजो विनिः ५।२।१२१॥

असन्ताद् माया-मेधा-स्रज् इत्येतेभ्यो मत्वर्थे विनि-प्रत्ययो भवति। यशस्वी, यशस्वान्। मायावी। मेधावी। स्रग्वी।

इति मत्वर्थीय-प्रकरणम्।

---

५६४- 'वह इसका है या वह इसमें है' इस अर्थ में प्रथमान्त प्रातिपदिकों से मतुप् प्रत्यय होता है।

५६५- यवादिगणरहित मवर्णान्त और अवर्णान्त तथा मकारोपध और अवर्णोपध प्रतिपदिकों से परे मतुप् के मकार के स्थान पर वकार आदेश होता है।

५६६- अदन्त प्रथमान्त प्रातिपदिक से मत्वर्थ में विकल्प से इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं।

५६७- अस् अन्त में हो ऐसे शब्द, माया, मेधा एवं स्रज् शब्दों से मत्वर्थ में विनि प्रत्यय होता है।

इति मत्वर्थीयप्रकरणम्।

# अथ प्राग्दिशीयप्रकरणम्

विभक्तिसंज्ञाविधायकं संज्ञासूत्रम्

## ५६८. प्राग्दिशो विभक्तिः ५।३।१।।

'दिक्छब्देभ्य' इत्यतः पूर्वं वक्ष्यमाणाः प्रत्यया विभक्तिसंज्ञका भवन्ति।

तसिलादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ५६९. पञ्चम्यास्तसिल् ५।३।७।।

पञ्चम्यन्तेभ्यः किमादिभ्यः प्रातिपदिकेभ्यस्तसिल् वा भवति।

कु-आदेशविधायकं विधसूत्रम्

## ५७०. कु तिहोः ७।२।१०४।।

किमः 'कु' इत्यादेशो भवति तादौ हादौ च विभक्तौ परतः।

कुतः, कस्मात्।

इशादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ५७१. इदम इश् ५।३।३।।

प्राग्दिशीये परे इदमः स्थाने इशादेशो भवति। इतः।

अनादेशविधायकं विधिसूत्रम्

## ५७२. एतदोऽन् ५।३।५।।

एतदः स्थाने अन् भवति प्राग्दिशीये। अतः। यतः। ततः। बहुतः।

---

५६८- इस सूत्र से लेकर आगे 'दिक्छब्देभ्यः' तक जितने प्रत्यय बताये जायेंगे, उनकी विभक्तिसंज्ञा होती है।

५६९- पञ्चम्यन्त किम्, सर्वनाम और बहु आदि प्रातिपदिकों से विकल्प से तसिल् प्रत्यय होता है।

५७०- तकारादि और हकारादि विभक्ति के परे होने पर किम् शब्द के स्थान पर 'कु' आदेश होता है

५७१- प्राग्दिशीय के परे होने पर इदम् के स्थान पर इश् आदेश होता है।

५७२- प्राग्दिशीय के परे होने पर एतद् के स्थान पर अन् आदेश होता है।

त्रल्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५७३. सप्तम्यास्त्रल् ५।३।१०॥**

सप्तम्यन्तेभ्यः किमादिभ्यस्त्रल् भवति। कुत्र। यत्र। तत्र। सर्वत्र। बहुत्र।

ह-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५७४. इदमो हः ५।३।११॥**

सप्तम्यन्तात् इदमो हो भवति। इह।

अत्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५७५. किमोऽत् ५।३।१२॥**

सप्तम्यन्तात् किमोऽद्वा भवति। पक्षे त्रलपि।

क्वादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५७६. क्वाति ७।२।१०५॥**

अति परे किमः क्वादेशो भवति। क्व, कुत्र।

दा-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५७७. सर्वैकान्यकिंयत्तदः काले दा ५।३।१५॥**

सप्तम्यन्तेभ्यः कालार्थेभ्यः सर्वैकान्यकिंयत्तदेभ्यः स्वार्थे दा प्रत्ययो भवति।

सादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५७८. सर्वस्य सोऽन्यतरस्यां दि ५।३।६॥**

दादौ प्राग्दिशीये परे सर्वस्य स्थाने सादेशो वा भवति।

सर्वस्मिन् काले सदा, सर्वदा। एकदा। अन्यदा। कदा। यदा। तदा।

.................................................................................................................

५७३- सप्तम्यन्त किम् आदि शब्दों से त्रल् प्रत्यय होता है।

५७४- सप्तम्यन्त इदम् शब्द से ह प्रत्यय होता है।

५७५- सप्तम्यन्त किम् शब्द से वैकल्पिक अत् प्रत्यय होता है।

५७६- अत् के परे होने पर किम् के स्थान पर क्व आदेश होता है।

५७७- सप्तम्यन्त कालार्थक सर्व, एक, अन्य, किम्, यत् और तत् शब्दों से स्वार्थ में दा प्रत्यय होता है।

५७८- दकारादि प्राग्दिशीय के परे सर्व शब्द के स्थान पर स आदेश होता है।

थाल्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ५७९. प्रकारवचने थाल् ५।३।२३।।

प्रकारवृत्तिभ्यः किमादिभ्यस्थाल् भवति स्वार्थे। तेन प्रकारेण तथा। यथा।

थमु-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

## ५८०. इदमस्थमुः ५।३।२४।।

प्रकारवचने इदमः थमुर्भवति। 'एतेतौ रथोः' इत्यनेन 'इत्'। अनेन प्रकारेण इत्थम्।

थमु-विधायकं विधिसूत्रम्

## ५८१. किमश्च ५।३।२५।।

प्रकारवचने किमश्च थमुर्भवति। केन प्रकारेण कथम्।

इति प्राग्दिशीयप्रकरणम्।

---

५७९- कैसे, ऐसे, वैसे आदि प्रकार अर्थ में किम् आदि से थाल् प्रत्यय होता है।

५८०- प्रकारवचन में इदम् से थमु प्रत्यय होता है।

५८१- प्रकारवचन में किम् से थमु प्रत्यय होताह है।

इति प्राग्दिशीयप्रकरणम्।

# अथ प्रागिवीय-प्रकरणम्

तमबिष्ठन्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८२. अतिशायने तमबिष्ठनौ ५।३।५५॥**

अतिशयविशिष्टार्थवृत्तेः स्वार्थे तमप्-इष्ठनौ प्रत्ययौ भवतः।

अयमेषामतिशयेनाढ्यः आढ्यतमः। लघुतमः।

तरबीयसुन्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८३. द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ ५।३।५७॥**

द्वयोरेकस्यातिशये विभक्तव्ये चोपपदे तरप्-ईयसुनौ प्रत्ययौ भवतः।

अयमनयोरतिशयेन लघुः लघुतरः। पटुतरः।

डतरच्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८४. किंयत्तदो निर्धारणे द्वयोरेकस्य डतरच् ५।३।९२॥**

द्वयोरेकस्य निर्धारणे गम्ये किम्-यत्-तद्-इत्येतेभ्यो डतरच् भवति।

अनयोः कतरो वैष्णवः। यतरः। ततरः॥

डतमच्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८५. वा बहूनां जातिपरिप्रश्ने डतमच् ५।३।९३॥**

बहूनां मध्ये एकस्य निर्धारणे डतमज्वा भवति।

कतमः पटुः। यतमः।

.........................................................................................

५८२- अतिशय विशिष्ट अर्थ में विद्यमान प्रातिपदिक से स्वार्थ में तमप् और इष्ठन् प्रत्यय होते हैं।

५८३- दो में से एक की विशेषतया विभक्त करने अर्थ में तरप् और ईयसुन् प्रत्यय होते हैं।

५८४- दो में से एक का निर्धारण गम्यमान होने पर किम्, यत्, तत् से डतरच् प्रत्यय होता है।

५८५- बहुतों में से एक के निर्धारण में डतमच् प्रत्यय विकल्प से होता है।

धा-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८६. सङ्ख्याया विधार्थे धा ५।३।४२॥**

क्रियाप्रकारार्थे वर्तमानात् सङ्ख्याशब्दात् स्वार्थे धा-प्रत्ययो भवति। चतुर्धा। पञ्चधा। कतिधा।

चरट्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८७. भूतपूर्वे चरट् ५।३।५३॥**

भूतपूर्वेऽर्थे चरट् भवति। भूतपूर्वः कुलपतिः कुलपतिचरः। सचिवचरः।

इति प्रागिवीयप्रकरणम्।

---

५८६- क्रिया के प्रकार अर्थ में विद्यमान सङ्ख्या-वाचक शब्दों से स्वार्थ में धाप्रत्यय होता है।

५८७- भूतपूर्व अर्थ के लिए प्रथमान्त प्रातिपदिकों से चरट् प्रत्यय होता है।

इति प्रागिवीयप्रकरणम्।

# अथ स्वार्थिक-प्रकरणम्

कन्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८८. इवे प्रतिकृतौ ५।३।९६॥**

इवार्थे प्रतिकृतौ वर्तमानात् प्रातिपदिकात् स्वार्थे कन्-प्रत्ययो भवति।

अश्व इव प्रतिकृतिः- अश्वकः। उष्ट्रकः।

च्वि-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५८९. कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विः ५।४।५०॥**

अभूततद्भावेऽर्थे कर्तरि च कृ-भू-अस्धातोर्योगे च्विर्वा भवति।

ईदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५९०. अस्य च्वौ ७।४।३२॥**

अवर्णस्य ईदादेशो भवति च्वौ।

अकृष्णः कृष्णः सम्पद्यते, तं करोति कृष्णी करोति। ब्रह्मी भवति।

दीर्घविधायकं विधिसूत्रम्

**५९१. च्वौ च ७।४।२६॥**

च्वौ परे पूर्वस्य दीर्घो भवति। अग्नी भवति।

इति स्वार्थिकप्रकरणम्।

---

५८८- 'आकृत्या सदृश' अर्थ में प्रातिपदिक से स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है।

५८८ 'अभूत-तद्भाव' गम्यमान होने पर कृ, भू और अस् के योग में प्रातिपदिकों से च्वि प्रत्यय होता है।

५९०- अवर्ण के स्थान पर ईकार आदेश होता है च्वि के परे होने पर।

५९१- च्वि के परे होने पर पूर्व के अङ्ग को दीर्घ होता है।

इति स्वार्थिकप्रकरणम्।

# अथ स्त्रीप्रत्यय-प्रकरणम्

अधिकारसूत्रम्

**५९२. स्त्रियाम् ४।१।३॥**

अधिकारोऽयम्।

टाप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५९३. अजाद्यतष्टाप् ४।१।४॥**

अजादिगणपठितेभ्योऽकारान्तेभ्यश्च स्त्रियां टाप्-प्रत्ययो भवति।

अजा। अश्वा। बाला। वत्सा। सर्वा।

ङीप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५९४. उगितश्च ४।१।६॥**

उगिदन्तात्प्रातिपदिकात् स्त्रियां ङीप्-प्रत्ययो भवति।

भवती। भवन्ती। पचन्ती।

ङीष्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५९५. षिद्गौरादिभ्यश्च ४।१।४१॥**

षिद्भ्यो गौरादिभ्यश्च स्त्रियां ङीष्-प्रत्ययो भवति।

गार्ग्यायणी। गौरी।

ङीप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५९६. वयसि प्रथमे ४।१।२०॥**

प्रथमवयोवाचिनोऽदन्तात् स्त्रिया ङीप्। कुमारी। किशोरी।

---

५९२- अब स्त्रियाम्(स्त्रीलिङ्ग में) का अधिकार होता है।

५९३- अजा-आदि और अकारान्त शब्दों से वाच्य स्त्रीत्व के द्योतन में अर्थात् स्त्रीलिङ्ग के लिए टाप् प्रत्यय होता है।

५९४- उगित् अन्त में हो ऐसे प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है।

५९५- षित् प्रातिपदिक या गौरादि गणपठित शब्दों से ङीष् प्रत्यय होता है।

५९६- आयु की प्रथम अवस्था के वाचक शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है।

वैकल्पिक-ङीष्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५९७. वोतो गुणवचनात् ४।१।४४।।**

उदन्ताद् गुणवाचिनो वा ङीष्। मृद्वी, मृदुः। पट्वी, पटुः।

ङीप्-प्रत्ययविधायकं विधिसूत्रम्

**५९८. पुंयोगादाख्यायाम् ४।१।४८।।**

पुंसः स्त्रीति पुंयोगे सति स्त्रियां ङीप्-प्रत्ययो भवति। गोपस्य स्त्री गोपी।

**वार्तिकम्- पालकान्तान्न।**

इदादेशविधायकं विधिसूत्रम्

**५९९. प्रत्ययस्थात् कात्पूर्वस्यात इदाप्यसुपः ७।३।४४।।**

प्रत्ययस्थात् कात्पूर्वस्याकारस्येकारादेशो भवति आपि परे, स आप् सुपः परो न चेत्। गोपालिका। अश्वपालिका। सर्विका। कारिका।

आनुगागम-ङीष्-विधायकं विधिसूत्रम्

**६००. इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य-यव-यवन-मातुलाचार्याणामानुक् ४।१।४९।।**

एषामानुगागमो भवति ङीष् च। इन्द्रस्य स्त्री इन्द्राणी। वरुणानी। भवानी। शर्वाणी। रुद्राणी। मृडानी। मातुलानी।

इति स्त्रीप्रत्ययप्रकरणम्।

---

५९७- ह्रस्व उकारान्त गुणवाचक शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से ङीप् प्रत्यय होता है।

५९८- पुरुष के साथ सम्बन्ध जोड़कर स्त्रीत्व की विवक्षा होने पर ङीप् प्रत्यय होता है।

वार्तिकार्थः- पालक अन्त में हो ऐसे शब्दों से ङीप् नहीं होता है।

५९९- प्रत्ययस्थ ककार से पूर्व में स्थित अकार के स्थान पर इकार आदेश होता है आप के परे होने पर, यदि वह आप सुप् से परे न हो तो।

६००- इन्द्र, वरुण, भव, शर्व, रुद्र, मृड, हिम, अरण्य, यव, यवन, मातुल और आचार्य इन शब्दों को आनुक् का आगम होता है और इन से परे ङीष् प्रत्यय भी।

इति स्त्रीप्रत्ययप्रकरणम्।

श्रीधराचार्यशिष्येण गोविन्देन च शर्मणा।
पाणिनीयं शब्दशास्त्रं सुसंक्षिप्य सुबोधिनी॥१॥
कृतेयं बालबोधार्थमृजुसिद्धान्तकौमुदी॥
कर्मणानेन विदुषां तोषाय सम्भवेत् सदा॥२॥

समाप्ता ऋजुसिद्धान्तकौमुदी

..................................................................................................................................

श्लोकार्थः- वैकुण्ठवासी अनन्तश्रीविभूषित श्रीनिवास मुक्तिनारायण रामानुज जीयर (श्रीश्रीधराचार्य) स्वामी जी महाराज के कृपापात्र गोविन्द प्रसाद शर्मा (गोविन्दाचार्य) के द्वारा पाणिनीय विशाल शब्दशास्त्र अर्थात् व्याकरणशास्त्र को अत्यन्त संक्षिप्त करके बालकों को सरलतापूर्वक बोध कराने के लिए ऋजुसिद्धान्तकौमुदी की रचना की गई। इस कार्य से विद्वानों की प्रसन्नता सदा प्राप्त होती रहे।

ऋजुसिद्धान्तकौमुदी का अर्थ पूर्ण हुआ।

# धातुसूची

# अकारादिक्रमेण सूत्रसूची

यह सूत्रसूची अकारादि क्रम से होते हुए भी
सूत्रसंख्या के क्रम से है।

# एक हजार प्रकाण्ड विद्वान तैयार करने का महान् लक्ष्य

श्री गोविन्दाचार्य (गोविन्द प्रसाद शर्मा) संचालक- श्री मुक्तिनाथ वेद विद्याश्रम, दिल्ली एवं संस्थापक एवं प्रमुख न्यासी **श्रीनिवास सेवार्थ न्यास**, दिल्ली ने एक महान संकल्प लिया है कि हम अपने जीवन में वेद, वेदाङ्ग, वेदान्त के एक हजार प्रकाण्ड विद्वान तैयार करके देश-विदेश में प्रचारार्थ लगा सकें, जो नगर-नगर, गाँव-गाव में जाकर सेवा करें। इसी क्रम में आज आपके सत्प्रयास से दिल्ली, चण्डीगढ़, पंचकूला, भिवानी, मैसूर कर्नाटक, पनवेल-मुम्बई आदि नगरों में विद्याश्रम चल रहे हैं जहाँ २५० से अधिक छात्र वेद, वेदांग, वेदान्त, ज्योतिष, योग, ध्यान आदि की निःशुल्क आवास, भोजन, पुस्तक, वस्त्र आदि की सुविधा के साथ शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने वाले लोग तो धनव्यय करके भी शिक्षा प्राप्त करते हैं किन्तु इन विषयों के छात्र इतने सम्पन्न नहीं हैं। अतः प्राचीन काल से ही ऋषि-पद्धति में निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था रही है। जो लक्ष्मीपुत्र महानुभाव इस महान कार्य में सहभागी बनना चाहें, ऐसे देश-विदेश के लोगों से हमारी प्रार्थना है कि कम से कम एक छात्र का सम्पूर्ण व्यय(मासिक एक हजार रुपये) वहन कर भारतीय संस्कृति परम्परा के संरक्षण एवं संवर्धन तथा प्रचार प्रसार के महायज्ञ में आहुति देकर देश-समाज के प्रति अपना दायित्व पूर्ण करें।

सुदर्शनाचार्य, सम्पादक- योगालोक

यतिराज–प्रकाशनम्, दिल्ली

6, मारवाड़ी घाट, कुदसिया घाट,
बेला रोड दिल्ली–54,
दूरभाष :- 011-23930776, 09810429487